www.thearyasamaj.org

ओ३म्

आर्य जगत्

कृण्वन्तो विश्वमार्यम्

रविवार, 04 दिसम्बर 2016 | आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा का साप्ताहिक पत्र | सप्ताह रविवार, 04 दिसम्बर 2016 से 10 दिसम्बर 2016

मार्गशीर्ष शु. –05 ● वि० सं०–2073 ● वर्ष 58, अंक 51, प्रत्येक मंगलवार को प्रकाश्य, दयानन्दाब्द 193 ● सृष्टि–संवत् 1,96,08,53,117 ● पृ.सं. 1–12 ● इस अंक का मूल्य – 2.00 रुपये

डी.ए.वी. ने दिया अपने शिक्षा कार्यक्रम को विस्तृत आयाम

विश्व के चार देशों से छात्र आए विभिन्न डी.ए.वी. संस्थाओं में

डी.ए.वी. कॉलेज प्रबंधकर्त्री समिति के मुख्यालय में पिछले दिनों रूस, जर्मनी, मिस्त्र और इंडोनेशिया से आए लगभग 100 छात्रों को सम्बोधित करते हुए डी.ए.वी. के प्रधान डॉ. पूनम सूरी ने कहा कि आज शिक्षा की गतिविधियों को किसी एक क्षेत्र अथवा देश तक सीमित नहीं रखा जा सकता, बल्कि विश्व–भर के देशों में युवा–छात्रों को आपस में मिलने, विचार–विनियम करने तथा मानवता के मूल्यों को आत्मसात् करने के अवसर प्रदान करने की आवश्यकता है। उन्होंने कहा कि इस तरह के विचार–विनिमय से इस विश्व को बेहतर बनाया जा सकेगा और आतंकवाद, गरीबी और भुखमरी जैसी समस्याओं के निदान खोजने में सफलता मिलेगी।

शिक्षा–क्षेत्र में विद्यार्थी विनिमय का यह कार्यक्रम डी.ए.वी. सेन्टर फॉर एकेडेमिक एक्सीलेंस के तत्त्वावधान में किया गया। योजना के अनुसार रूस, जर्मनी, मिस्त्र और इंडोनेशिया से आए इन छात्रों को डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, पीतमपुरा, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, विकासपुरी, डी.एल.डी.ए.वी. मॉडल स्कूल, पीतमपुरा, डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, पुष्पांजलि एन्क्लेव में ठहराया गया था। इस पूरे कार्यक्रम में विदेशी छात्रों को भारतीय संस्कृति, रीति–रिवाज, यहाँ के खान–पान, वेशभूषा, नृत्य–संगीत तथा रहन–सहन का परिचय तो मिला ही, साथ ही इन संस्थाओं में चल रहे शैक्षिण कार्यक्रमों से रू–ब–रू होने का भी मौका मिला।

डी.ए.वी. शैक्षिक उत्कृष्टता केन्द्र की निदेशिका डॉ. निशा पेशिन ने बताया कि ऐसे कार्यक्रमों को भविष्य में और भी विस्तार देने की योजना है। श्रीमती राजिन्द्र नरूला (ओ.एस.डी., डी.ए.वी. सेन्टर फॉर एकेडेमिक एक्सीलेंस) ने इस सारे कार्यक्रम को बहुत ही सुचारू रूप से अंजाम दिया।

डी.ए.वी. कॉलेज प्रबन्धकर्त्री समिति एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा के प्रधान डॉ पूनम सूरी पर डाक टिकट जारी

हंसराज महिला महाविद्यालय जालंधर के इतिहास में तब एक और स्वर्णिम क्षण जुड़ गया जब संचार मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा डी.ए.वी कॉलेज प्रबन्धकर्त्री एवं आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा, नई दिल्ली के प्रधान आर्य रत्न परम श्रद्धेय डॉ पूनम सूरी के चित्र सहित डाक टिकट व एच.एम.वी. के चित्र सहित विशेष आवरण जारी किया गया। इसका आयोजन पोस्टल डिवीज़न जालंधर की ओर से 34 वीं जिला स्तरीय डाक टिकट प्रदर्शनी 'जलपैक्स–2016' विरसा विहार में किया गया।

इस सुअवसर पर कॉलेज प्राचार्या प्रो. डॉ. श्रीमती अजय सरीन ने कहा कि हंसराज महिला महाविद्यालय के लिए यह अत्यन्त गौरव का विषय है कि वर्ष 2016 में एच.एम.वी. ऐसा सम्मान प्राप्त करने वाली प्रथम संस्था बन गई है। आर्य रत्न डॉ पूनम सूरी जी अपने दादा सूर्यवंशी महात्मा आनन्द स्वामी जी द्वारा स्थापित व प्रचारित आर्य लहर, जिसका एकमात्र उद्देश्य विश्व को आर्य बनाना है, कोकुशलतापूर्वक आगे बढ़ा रहे हैं। आर्य रत्न डॉ पूनम सूरी के मार्गदर्शन में लगभग एक हज़ार डी.ए.वी. संस्थाएँ कार्यरत हैं एवं प्रगति के पथ पर निरन्तर अग्रसर हैं। इनका भारतीय जनमानस को आर्य श्रेष्ठ बनाने में अमूल्य व सराहनीय योगदान है। इनके कुशल नेतृत्व में हंसराज महिला महाविद्यालय नित नए कीर्तिमान स्थापित कर रहा है। श्रद्धेय डॉ पूनम सूरी जी के चित्र सहित डाक टिकट जारी करवाने का उद्देश्य डी.ए.वी. की विचारधारा को विश्व पटल पर लाना है। इस अवसर पर पोस्टल डिवीज़न जालंधर की डायरैक्टर श्रीमती मीनाक्षी यादव ने प्राचार्या डॉ. अजय सरीन को डॉ. पूनम सूरी की डाक टिकटों व विशेष आवरणों का पहला सैट भेंट किया।

स्वजातीय या विजातीय ईश्वर अथवा अपने आत्मा में तत्त्वान्तर वस्तुओं से रहित एक होने से वह 'अद्वैत' है। – स. प्र. समु. १

संपादक – पूनम सूरी

www.thearyasamaj.org

ओ३म्
आर्य जगत्
सप्ताह रविवार, 04 नवम्बर 2016 से 10 दिसम्बर 2016

जय हो उसकी

● डॉ. रामनाथ वेदालंकार

महाँ इन्द्रः परश्च नु, महित्वमस्तु वज्रिणे।
द्यौर्न प्रथिना शवः ।। ऋग् 1.8.5

ऋषिः **मधुच्छन्दा वैश्वामित्रः।** देवता **इन्द्रः।** छन्दः **गायत्री।**

● (**इन्द्रः**) ऐश्वर्यशाली परमेश्वर (**महान्**) महान् [है], (**च**) और (**नु**) निश्चय ही (**परः**) सर्वोत्कृष्ट [है] (**वज्रिणे**) [उस] वज्रधारी का (**महित्वं**) महत्त्व, जयजयकार (**अस्तु**) हो। [उसका] (**शवः**) बल (**प्रथिना**) विस्तार और यश से (**द्यौः न**) द्युलोक के समान [है]।

● भाइयो! क्या तुम विश्व–सम्राट् इन्द्र का परिचय जानना चाहते हो? सुनो, वेद उसका परिचय दे रहा है। इन्द्र महान् है, महामहिम है, इस जगतीतल के बड़े से बड़े महिमाशालियों से भी अधिक महिमाशाली है। उसकी महिमा के सम्मुख सूर्य, चाँद, सितारे, नदी, पर्वत, सागर, चक्षु, श्रोत्र, वाक् मन सब तुच्छ है। वह 'पर' है, परम है, सर्वोत्कृष्ट है, इसलिए परामात्मा, परात्मा, परमेश्वर, परमदेव, परात्पर आदि नामों से स्मरण किया जाता है। सर्वोत्कृष्ट होने के कारण ही वह संसार में सबसे अधिक स्पृहणीय है, क्योंकि जो वस्तु जितनी अधिक उत्कृष्ट है, उसे हम उतना ही अधिक पाना चाहते हैं। निकृष्ट या घटिया वस्तु हमारे मन को नहीं भाती। इन्द्र–प्रभु परमोत्कृष्ट होने के कारण हमारा मन–भावन होने योग्य है, हमारी अभीप्सा का पात्र होने योग्य है।

उसके बल, विस्तार और यश का हम क्या बखान करें! कोई सांसारिक वस्तु उसका उपमान नहीं बन सकती, क्योंकि उपमान उपमेय से उत्कृष्ट हुआ करता है, जबकि संसार की कोई वस्तु किसी गुण में उससे उत्कृष्ट नहीं है। फिर भी परस्पर समझने और समझाने के लिए हम कह सकते हैं कि इन्द्र के बल का विस्तार और यश, द्युलोक के समान है। ज्यों ही हम द्युलोक के बल पर दृष्टि डालते हैं, हमारी आँखें चौंधिया जाती हैं। देखो, द्युलोक के सूर्य को देखो! सूर्य का बल इतना व्यापक है कि उसने ग्रहोपग्रहों सहित हमारे सारे सौर–मंडल को अपनी आर्कषणशक्ति रूप डोर से बाँध रखा है। उसने अपने प्रकाश से सबको प्रकाशित कर रखा है, अन्यथा हमारी भूमि और अन्य ग्रहोपग्रह सब चिर अन्धकार में विलिन हो जाएँ। सूर्य तो द्युलोक का एक सदस्यमात्र है। द्युलोक में अन्य अनेक नक्षत्र–पुंज भी है, जिनके बल, विस्तार और यश के आगे तो हमारी बुद्धि चकरा जाती है। वे सब अपने–आपमें एक–एक सूर्य हैं और वैज्ञानिकों का कथन है कि उनके भी अपने–अपने ग्रहोपग्रह हैं, जिनका वे संचालन और व्यवस्थापन करते हैं। तो, उस द्युलोक के समान विस्तीर्ण एवं यशस्वी इन्द्र का बल है।

वह इन्द्र वज्रधर भी है, पापात्माओं को उनके कर्मा के अनुरूप दण्ड देनेवाला है। यदि हम उसकी दण्ड–शक्ति का मन में ध्यान कर लें, तो जीवन में होनेवाली सब उच्छृङ्खलताओं और अविवेकमय आचरणों से उद्धार पालें। आओ, महिमागान करें जगत् के उस परम यशस्वी सम्राट् इन्द्र का। आओ, जय–जयकार करें उस वज्रधारी का।

❑

वेद मंजरी से

इस अंक में प्रकाशित सभी लेखों में व्यक्त भावों व विचारों के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी हैं और इसमें किसी आपत्तिजनक बात के लिए 'सम्पादक' एवं 'आर्य जगत्' उत्तरदायी नहीं होगा।

मानव जीवन गाथा

● महात्मा आनन्द स्वामी

पिछले अंक में चर्चा हो रही थी कि तप से और सहनशीलता से अन्ततोगत्वा मनुष्य को विजय प्राप्त होती है। बुरे व्यक्ति भी अपना स्वभाव लेते हैं। हीरा और कोयला दोनों एक ही परिवार की वस्तुएँ हैं। हीरा भी पहले कोयला होता है, बाद में हीरा बनता है, परन्तु बनता है बहुत–से कष्ट सह कर। ऊपर से अरबों टन बोझ उसे दबाता है। नीचे से गर्मी तपाती है। करोड़ों वर्षों के तप के पश्चात् वह हीरा बनता है। तप से पूर्व–कोयले की दशा में यदि वह बाहर आ जाए तो उसके लिए केवल एक स्थान है, जलती हुई अग्नि और सदा के लिए राख। हीरा बनने की अभिलाषा है तो तप करो। शान्ति से, धैर्य से संकटों को सहन करो। सहनशक्ति से बड़े–बड़े कार्य होते हैं। मुण्डक ऋषि के बताये तीसरे साधन से आत्मदर्शन होता है।

––अब आगे

यह तीसरा साधन है सम्यक्, यथार्थ, ठीक और उचित ज्ञान। सम्यक् ज्ञान दो प्रकार का है – एक प्रकृति से सम्बन्धित, दूसरा आत्मा से सम्बन्धित। जितनी भी सृष्टि है – छोटे – से – छोटे परमाणु से लेकर खरबों मीलों में फैले सूर्य–मण्डलों तक और उनसे भी परे। इन सब वस्तुओं का ज्ञान एक प्रकार का ज्ञान है, परन्तु इस सारे ज्ञान को प्राप्त कर लेने पर भी आत्मा का ज्ञान नहीं होता। आत्मा का ज्ञान अलग वस्तु है, दूसरे प्रकार का ज्ञान नहीं। यजुर्वेद के चालीसवें अध्याय में इन दोनों बातों को अविद्या और विद्या के नाम से याद किया गया है। वेद भगवान् कहते हैं–

अन्धन्तमः प्र विशन्ति येऽविद्यामुपासते।
ततो भूयं इव ते तमो य उ विद्यायाँरताः।।
अन्यदेवाहुर्विद्याया अन्यदाहुरविद्यायाः।
इति शुश्रुम धीराणां ये नस्तद्विचचक्षिरे।।
विद्यां चाविद्याँ च यस्तद् वेदोभयँसह।
अविद्यया मृत्युँ तीर्त्वा विद्ययाऽमृदमश्नुते।।

'वे लोग महान् अँधेरे में डूबते हैं, जो केवल अविद्या की उपासना करते हैं। इन्हीं की भाँति वे भी अँधेरे में रहते हैं जो केवल विद्या के पीछे लगे रहते हैं। इतना होते हुए भी कई विद्वान् कहते हैं अविद्या से ही सब – कुछ होता है। दूसरे कहते हैं विद्या से ही सब – कुछ होता है। अशुद्ध बात है यह। विद्या और अविद्या दोनों को जो साथ–साथ जानता है, उसी का कल्याण होता है। अविद्या से मृत्यु को पार करता अर्थात् निरन्तर बदलती हुई, मरती हुई, बनती हुई और पुनः मरती हुई प्रकृति पर विजय प्राप्त करता है और विद्या से अमृत प्राप्त करता है, अर्थात् उस आत्मा का और ईश्वर का दर्शन करता है, जिसके लिए विनाश नहीं, मृत्यु नहीं, परिवर्तन और समाप्ति नहीं।'

प्रकृति का ज्ञान अर्थात् अविद्या, और आत्मा का ज्ञान अर्थात् विद्या, दोनों का नाम है सम्यक् ज्ञान, यथार्थ ज्ञान, ठीक और उचित ज्ञान। यदि प्रकृति का ज्ञान नहीं तो शरीर के कष्ट दूर नहीं होंगे और यदि आत्मा का ज्ञान नहीं तो वह आनन्द नहीं मिलेगा जो केवल आत्मदर्शन से मिलता है। यह है हमारी संस्कृति। केवल प्रकृति नहीं, केवल आत्मा नहीं, अपितु दोनों को साथ–साथ लेकर चलो। दोनों को अलग–अलग कर देने से – दोनों में से एक को भुला देने से कल्याण नहीं होता। आज संसार के समस्त कष्टों का कारण क्या है? केवल यह कि पूरी शक्ति के साथ संसार अविद्या की उपासना करने में लग गया है। यह बुरी बात नहीं। बहुत अच्छी बात है। यह वह विद्या है जिसका वेद भगवान् ने वर्णन किया। इंजीनियर बनो। विज्ञान पढ़ो। प्रकृति के रहस्यों का अन्वेषण करो। विद्युत्, वाष्प और परमाणु शक्ति से कार्य लो। सूर्य, चन्द्र, नक्षत्रों तक पहुँचो। ये सब अच्छी बातें हैं। यह इन्द्रियों का जीवन है, लगातार प्रकृति की ओर ले जाता है। परन्तु सुनो, सुनो, सुनो! यह सब–कुछ बहुत होने पर भी अधूरा है। इसके साथ–साथ जब तक आत्मज्ञान नहीं होगा तग तक कहीं शान्ति नहीं मिलेगी। तब तक प्रकृति का यह ज्ञान अधिक–से–अधिक अन्धकार की ओर धकेलता जायेगा।

आत्मज्ञान क्या है?

–कौन हूँ मैं? यह सारा संसार क्या है? कहाँ से आया हूँ? कहाँ जाऊँगा? यह जो कुछ दृष्टिगोचर होता है इसका अन्त क्या है? किसने इसको यह रूप दे दिया? कहाँ है वह? कैसे मिलेगा? इन सब प्रश्नों पर विचार करना और विचार करने के पश्चात् इसके सम्बन्ध में वास्तविकता खोजना।

एक समय था, जब यह सब–कुछ सोया हुआ था–

तम आसीत् तमसा गूळ्हमग्रेऽप्रकेतम्।।
ऋ. 10/129/3।।

महान् अन्धकार था, हर ओर अँधेरे के सिवा कुछ भी नहीं था। उस समय

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org

"आश्रम व्यवस्था में ही समाज का समग्र सुख निहित है"

(सत्यार्थ प्रकाश पंचम समुल्लास के आधार पर)

● अशोक आर्य

वैदिक संस्कृति के अनुसार मानव जीवन को शतायु बतलाया गया है। यजुर्वेद में **'अदीनाः स्याम शरदः शतम्'** (यजु. 36/24) तथा **'कुर्वन्नेवेह कर्माणि जिजीविषेच्छत ँ समाः'** (यजु. 40/2) की कामना की गई है। इन सौ वर्ष की यात्रा की गति, एक ही शक्ति तथा एक ही उत्साह से नहीं हो सकती, इसलिए प्राचीन ऋषियों ने मानव जीवन की इस यात्रा को चार भागों में विभक्त करके 25–25 वर्ष के चार पड़ाव डाल दिये हैं; इन पड़ावों के नाम हैं–ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास। यही आश्रम–व्यवस्था कहलाती है।

इस व्यवस्था में श्रमहीन एवं निकम्मे रहने की कहीं भी कोई गुंजायश नहीं है। आश्रम पद का शाब्दिक अर्थ है **'आ समन्तात श्रमो यत्र स आश्रमः'**, अथवा **'आश्रयन्ति यत्र स आश्रमः'**, अर्थात् जहाँ सब प्रकार से श्रम किया जाता है, वह आश्रम है। मनुष्य का श्रम चार प्रकार का है–अध्ययनात्मक, सर्जनात्मक, तपस्यात्मक और योगात्मक। (भारतस्य सांस्कृतिकनिधिः –रामजी उपाध्याय पृ. 45) ब्रह्मचर्य आश्रम में विद्यार्थी पढ़ता है, अपना ध्यान पुस्तक, भोजन, वस्त्र, शारीरिक उन्नति तथा योग्यता प्राप्त करने तक केन्द्रित रखता है। विद्यार्थी का यह सारा का सारा अध्ययनात्मक श्रम स्व (अपने) तक ही सीमित रहता है। गृहस्थाश्रम में अर्थोपार्जन के लिए श्रम करता है। माता–पिता, पत्नी, संतानों एवं परिवार के सदस्यों की सुख–सुविधाओं का ध्यान रखता है। कहने का तात्पर्य दूसरों को सुखी देखकर स्वयं सुखी होना। वानप्रस्थाश्रम में तपस्यात्मक श्रम करना पड़ता है। हम अपने परिवार, बच्चों तक ही सिमट कर न रह जाएं। गाँव के लोगों के परिवार को अपना बनाने का विकास करना। संन्यास आश्रम की अवस्था में योग की साधना के लिए श्रम किया जाता है। उस समय उसकी सारी एषणायें (पुत्रैषणा, वित्तेषणा एवं लोकेषणा) समाप्त हो चुकी होतीं हैं। संन्यासी की भावना **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** की हो जाती है।

आश्रम–व्यवस्था के अन्तर्गत ही मनुष्य तीन ऋणों–पितृऋण, देवऋण और ऋषि ऋण से उऋण होकर समग्र सुखों की प्राप्ति करता है। ब्रह्मचर्याश्रम में आचार्यों से विद्या प्राप्त करके शिष्य ऋषियों का ऋणी हो जाता है। समावर्त्तन संस्कार के समय गुरु दक्षिणा देकर व निरंतर स्वाध्याय करने एवं समाज में ज्ञान का प्रकाश करने की प्रतिज्ञा कर वह इस ऋण से मुक्त होता है। गृहस्थ में माता–पिता की सेवा करके तथा राष्ट्र को सुशिक्षित, संस्कारित एवं सुयोग्य संतानें प्रदान कर वह पितृऋण से मुक्त होता है। वानप्रस्थ में स्वाध्याय, तपस्यादि में संलग्न रहकर छात्रों को विद्याध्ययन कराके और परोपकार के कार्य करके वह देवऋण से मुक्त होता है। संन्यास आश्रम तीनों ऋणों से मुक्ति का आश्रम है।

मनुष्य जीवन के चार पुरुषार्थ (धर्म, अर्थ काम एवं मोक्ष) हैं। चारों पुरुषार्थों का भी चार आश्रमों से सम्बन्ध है। आश्रमों के माध्यम से इन्हें प्राप्त किया जा सकता है। ब्रह्मचर्य आश्रम में मनुष्य, धर्म के तत्त्वों का ज्ञान प्राप्त करता है। गृहस्थ आश्रम में मुख्य रूप से अर्थ और काम की प्राप्ति होती है। वानप्रस्थ, धर्म की साधना का आश्रम है और संन्यास आश्रम में मोक्ष की साधना होती है। मनुष्य का चरम उद्देश्य मोक्ष की प्राप्ति है तथा चार आश्रम इस लक्ष्य की चार सीढ़ियाँ हैं। इन पर चढ़कर मनुष्य मोक्ष प्राप्त करने में सफल होता है। **चतुष्पदी हि निः श्रेणी ब्रह्मण्येषा प्रतिष्ठता। एता मारूह्य निः श्रेणी ब्रह्म लोके महीयते।।** महाभारत शान्तिपर्व 242–15।। स्वामी दयानन्द ऋग्वेदादि–भाष्य–भूमिका वेदविषय–विचारः के अन्तर्गत लिखते हैं–"ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ और संन्यास आश्रम के सत्याचरणरूप जो कर्म हैं, वे भी ईश्वर की प्राप्ति के लिए हैं।" महर्षि दयानन्द लिखते हैं–**"जिसमें अत्यन्त परिश्रम करके उत्तम गुणों का ग्रहण और श्रेष्ठ काम किए जायें उनको आश्रम कहते हैं।** (आर्योद्देश्य रत्न माला)

कौटिल्य ने त्रयी विद्या के अन्तर्गत आश्रम व्यवस्था की महत्ता को स्वीकार करते हुए लिखा है–"त्रयी में निरूपित यह धर्म, चारों वर्णों और चारों आश्रमों को अपने–अपने धर्म कर्त्तव्य में स्थिर रखने के कारण लोक का बहुत ही उपकारक है।" **एष त्रयी धर्मश्चतुर्णां वर्णानामाश्रमाणां च स्व धर्मस्थापनादौपकारिकः।** (कौ. अ. 1/3)

पवित्र आर्य मर्यादा में अवस्थित, वर्णाश्रम धर्म में नियमित और वैदिक धर्म से रक्षित प्रजा दुःखी नहीं होती, सदा सुखी रहती है। (कौ. अ. 1/3)

महर्षि मनु ने आश्रम–व्यवस्था में ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ एवं संन्यास, इन चारों आश्रमों का पृथक्–पृथक् विधान किया है।

प्राचीन ऋषियों ने जिस वैज्ञानिक आश्रम व्यवस्था का विकास किया था, उसी का पुनः जीर्णोद्धार महर्षि दयानन्द सरस्वती ने सत्यार्थ प्रकाश के द्वितीय समुल्लास से लेकर पंचम समुल्लास में किया है। महर्षि ने यह भलीभांति समझ लिया था कि बिना आश्रम–व्यवस्था के समाज के सभी व्यक्तियों और वर्गों को समान रूप से समग्र विकास के अवसर प्राप्त नहीं हो सकते। एक निश्चित अवधि पर वानप्रस्थ एवं संन्यास आश्रम ग्रहण करने से पद एवं धन का लोभ–लालच अधिक प्रबल नहीं हो पाता और न ही समाज में वर्ग संघर्ष एवं वैमनस्य के अवसर आ पाते हैं। समाज में पवित्र सात्त्विक विचारों के उदय होने से सभी लोग सुखों की अनुभूति करते हैं।

वस्तुतः प्राचीन ऋषियों को अभीष्ट था कि यह जीवन मात्र भोगों में लिप्त न रहे अर्थात् भोगों से, चाह से, कामनाओं से ऊपर उठे। प्रेय मार्ग से श्रेय मार्ग की ओर, प्रवृत्ति मार्ग से निवृत्ति मार्ग की ओर, स्वार्थ से परार्थ की ओर, सकाम भावना से निष्काम भावना की ओर, भोग से त्याग की ओर, अपवर्ग की ओर बढ़ने के लिए ही "वर्णाश्रम व्यवस्था" की आधारशिला रखी गई है।

आश्रम व्यवस्था इस जन्म के संस्कारों के निर्माण एवं व्यक्तिगत तथा सामाजिक क्रियाओं के नियोजन का प्रयत्न है। **आश्रम व्यवस्था प्राचीन भारतीय चिन्तन के अद्वितीय ज्ञान और प्रज्ञा की प्रतीक है।** वस्तुतः जीवन की वास्तविकता को ध्यान में रखते हुए, कर्त्तव्य और आध्यात्म के आधार पर मानव जीवन को ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास आश्रमों में विभाजित किया गया। मनुष्य जीवन को पूर्णरूपेण पुरुषार्थ के सिद्धान्त पर चलाने की वास्तविक अभिव्यक्ति आश्रम व्यवस्था में निहित है। ब्रह्मचर्य तथा गृहाश्रम की विशद् विवेचना द्वितीय, तृतीय व चतुर्थ समुल्लास में की जा चुकी है। अतएव यहाँ वानप्रस्थ व संन्यास आश्रमों पर ही विचार करेंगे।

1. वानप्रस्थ आश्रम की वैदिकता

इस विषय में कतिपय विद्वानों की मान्यता है कि–वैदिक संहिताओं तथा ब्राह्मण ग्रन्थों में "आश्रम व्यवस्था" का उल्लेख नहीं है।

सत्यार्थ प्रकाश के प्रणेता महर्षि दयानंद सरस्वती महाराज ने स्वयं इस शंका को प्रस्तुत करके अन्यत्र इसका समाधान किया है। ऋग्वेदादिभाष्य भूमिका के **"ब्रह्म विद्या विषय"** के प्रारम्भ में उन्होंने लिखा है–**"वेदेषु सर्वा विद्याः सन्त्याहोस्विन्नेति"** वेदों में सब विद्याएँ हैं, किन्तु **"मूलोद्देशतः"** मूल रूप में। उसी वेद रूपी बीज को लक्ष्य में रखकर आगे ऋषि–मुनियों ने भिन्न–भिन्न विद्याओं का विस्तार करने के लिए ब्राह्मण, उपनिषद्, उपवेद, वेदांग, उपाङ्ग, गृह्यसूत्र, श्रौत सूत्र आदि अनेक ग्रन्थों का निर्माण किया। उन्हीं मूल–मंत्रों का आशय लेकर ऋषियों ने स्मृतियों, श्रौत सूत्रों और गृह्य सूत्रों में विधियों का विधान किया है।

अथर्ववेद मंत्र 9/5/1 में अज्ञान मोह आदि के महान् अन्धकारों को पार करके **"तृतीयनाक"** में आरोहण का उल्लेख है। महर्षि दयानन्द ने इसका अर्थ करते हुए लिखा है–"बहुत प्रकार के बड़े–बड़े अज्ञान, दुःख आदि संसार के मोहों को तरके अर्थात् पृथक् होकर अपने आत्मा को अजर–अमर जान, **तीसरे दुःख रहित वानप्रस्थाश्रम को आक्रमण अर्थात् रीतिपूर्वक आरूढ़ हो।"** (संस्कार विधि–वानप्रस्थ प्रकरण) वस्तुतः वेद में वानप्रस्थ का पर्याप्त उल्लेख मिलता है। हाँ, शब्दों का अर्थ "पर्याय" रूप में या "उपमा" रूप में हो सकता है। उदाहरणार्थ–

वातस्याश्वो वायोः सखाथो देवेषितो मुनिः।
उभौ समुद्रावा क्षेति यश्च पूर्व उतापरः।।
(ऋ. 10/136/5)

मुनयो वातरशनाः पिशङ्गा वसते मला।
वातस्यानु ध्राजिं यन्ति यद्देवासो अविक्षत।।
(ऋ. 10/136/2)

प्रथम मंत्र में "पूर्व" तथा "अपर" पदों से क्रमशः वानप्रस्थाश्रम तथा संन्यासाश्रम अभिप्रेत है। वेद में "मुनि" शब्द वानप्रस्थ का वाचक है। यह वानप्रस्थ का वर्णन करने वाले मनुस्मृति के छठे अध्याय में प्रयुक्त "मुनि" शब्द से सिद्ध है–**मुन्यन्नैर्विविधैर्मेध्यैः** (6–5) **"मुन्यन्नैः स्वयमाहृतैः** (6–12) **"मुन्यन्नं पूर्वसंचितम्** (6–15) **"मुनिर्मूलफलाशनः"** (6–25) निश्चय ही वेद में "मुनि" शब्द से वनी का बोध होता है।

महर्षि निष्कर्ष रूप में लिखते हैं–**"चार वर्ण, चार आश्रम, भूत, भविष्यत् और वर्त्तमान आदि की सब विद्या वेदों से ही प्रसिद्ध होती है।"** (ऋग्वेदादिभाष्य

शेष पृष्ठ 04 पर ☞

www.thearyasamaj.org

उपासक उपास्य संबंध

● नरेन्द्र आहूजा 'विवेक'

कोई भी उपासक किसी की उपासना क्यों करता है? उपासना की विधि क्या है और उपास्य देव कौन है? ये प्रश्न किसी भी उपासक के मन में उपासना के लिए उद्यत होने से पूर्व अक्सर ही उठते हैं। किसी भी उपासक के लिए अपने उपास्य देव को जानना, मानना, फिर उपासना करते हुए उस उपासना के उद्देश्य को प्राप्त करना होता है। उपास्य देव को पहचानने से पूर्व उपासक को अपनी स्थिति का बोध होना अत्यंत आवश्यक है। आइये इन प्रश्नों पर एक–एक कर विचार करते हैं।

प्रथम उपासक कौन? जिसमें भी किसी गुण विशेष का अभाव और उसके मन में उस गुण को प्राप्त करने की बलवती इच्छा जब उत्पन्न हो जाती है तो वह व्यक्ति सर्वप्रथम उस गुण विशेष संपन्न मित्र जो उसे वह गुण देकर कष्ट से मुक्त कर सके, उसकी खोज करता है। सरल शब्दों में यदि कोई निर्धन व्यक्ति धन चाहता है तो वह धन प्राप्ति की इच्छा से अपने ऐसे किसी मित्र की खोज करके उपासना करेगा जो धन प्रदान कर निर्धनता के कष्ट से मुक्ति दिलवा सके। इसी प्रकार रोगी वैद्य की, भूखा किसी लंगर चलाने वाले की खोज करके उपासना करता है। दूसरे शब्दों में उपासक वह है जिसमें किसी गुण का अभाव है और उस गुण के अभाव के कारण वह कष्ट की स्थिति में है। उपासक के लिए आवश्यक हो जाता है कि उसे इस बात का बोध हो कि उसमें किस गुण का अभाव है और उस अभाव के कारण होने वाले कष्ट को दूर करने के लिए उसमें उस गुण की ग्राह्यता के लिए बलवती इच्छा उत्पन्न हो। तीसरा वह किसी ऐसे व्यक्ति को खोजे जिसमें वह गुण पूर्व से ही विद्यमान हो। चौथा वह गुणी उपास्य उस गुण को उपासक को देने की इच्छा भी रखता हो। अन्तिम उपासक को अपने उपास्य देव की उपासना विधि का ज्ञान हो।

सामान्य लोकव्यवहार में हम अबोध मनुष्य उपासना के नाम पर क्या प्रपंच करते हैं? तेजी से गाड़ी चलाते सड़क के किनारे किसी पीर की मजार या मन्दिर के सामने धीरे से मस्तक झुका देना या फिर बहुत किया तो मन्दिर में जाकर किसी मूर्ति के समक्ष माथा झुकाना और चढ़ावा चढ़ा कर अपनी मांग रख देना जैसे उपासना ना हुई कोई व्यापार हो गया। "सवा मणी करूंगा मेरी लाटरी लगा दे", "मेरी मन्नत पूरी होने पर ये चढ़ावा चढ़ाऊंगा" या फिर "हे बजरंग बली तोड़ दुश्मन की नली"। इन सब में ना तो उपासक को अपनी स्थिति का बोध है ना उपास्य देव का और ना ही उपासना की विधि का। यहां उपासक को पता ही नहीं कि उसमें कौन सा गुण न्यून है और वह गुण उपास्य देव के पास है या नहीं और वह उसे कैसे पा सकता है। एक चेतन जीव द्वारा जड़ की उपासना से चेतनता की वृद्धि कैसे हो सकती है?

कलियुग के इंसान की उल्टी देखी चाल।
जड़ के आगे चेतना क्यों झुकावे भाल।।

जड़ की उपासना से तो चेतन के भी जड़ बन जाने की संभावना होती है जबकि यदि कोई जड़ पदार्थ किसी समर्थ चेतन कारीगर के हाथ लग जाए तो उसमें गति अवश्य आ जाती है जैसे घड़ीसाज के हाथ में घड़ी और मैकेनिक के हाथ में मोटर। इतना सब समझते हुए भी मनुष्य के रूप में मननशील होकर भी हम उपासक ना तो अपनी स्थिति को जान पाते हैं ना ही अपने गुणों की न्यूनता को और ना ही उपास्य देव जिसके पास वह गुण हों और उन्हें देने की इच्छा और सामर्थ्य रखता हो।

आइये इन प्रश्नों के उत्तर खोजते हैं। मनुष्य के रूप में जीव एकदेशीय होने के कारण अल्पज्ञ व अबोध है और ज्ञान प्राप्ति के लिए वह अन्यों पर निर्भर है। सृष्टि के निर्माण से पूर्व और संहार के बाद भी रहने वाला सर्वव्यापी सृष्टिकर्ता सर्वज्ञ है और उस सर्वज्ञ ईश्वर ने सृष्टि के समस्त प्राणियों के लिए वेदरूपी ज्ञान एक नियमावली संहिता के रूप में दिया है। अब अल्पज्ञ उपासक के लिए आवश्यक हो जाता है कि वह उस सर्वज्ञ प्रभु द्वारा दिए वेद ज्ञान को प्राप्त करे। इसीलिए महर्षि देव दयानन्द ने वेदों का पढ़ना पढ़ाना और सुनना सुनाना सभी आर्यों का परम धर्म बतलाया है। यदि हममें दया की कमी है तो हम परमदयालु परमपिता परमेश्वर से इस गुण को प्राप्त करें। ईश्वर न्यायकर्ता है तो हम भी अपने आचरण व्यवहार में दूसरों के साथ न्याय किया करें। हम अल्पशक्तिमान हैं और किसी भी सर्वहितकारी कार्य की सिद्धि के लिए व निष्काम भाव से यज्ञीय कार्य करने के लिए अपने सही दिशा में किए पूर्ण पुरुषार्थ के उपरान्त ईश्वर से प्रार्थना उस शक्ति को प्राप्त करने के लिए व सहाय के लिए किया करें। वही ईश्वर हमारा सच्चा सहायक व मित्र है। **'इन्द्रस्य युज्यः सखा'** कहकर वेद भगवान ने परमात्मा को जीवात्माओं का सच्चा मित्र कहा। ऋग्वेद में **'दूणाशं सख्यं'** कहकर स्पष्ट कर दिया कि ईश्वर की मित्रता स्थायी और विश्वसनीय है और इसी मंत्र में **'गौरसि वीर गव्यते'** तथा **'अश्वो अश्वायते भवे'** कहकर स्पष्ट कर दिया कि ईश्वर की मित्रता से गाय चाहने वाले को गाय और अश्व चाहने वाले को अश्व मिलता है। जिससे स्पष्ट है कि निष्काम भाव से किए जाने वाले परोपकार के यज्ञीय कार्यों के लिए सही दिशा में किए पुरुषार्थ के उपरान्त उपासना करते हुए हम उपासक मनुष्यों के लिए अपने उपास्य देव से निश्चित ही सहायता प्राप्त होती है। लेकिन यहां यह भी स्पष्ट है कि **'इन्द्रस्य इज्जरत सखा'** अर्थात् ईश्वर उनकी सहायता करता है जो अपनी सहायता स्वयं करने के लिए उद्यत हो।

इससे स्पष्ट हो जाता है कि गुणों के अभाव के कारण हम अल्पशक्ति वाले अबोध, अज्ञानी मनुष्य उन गुणों की प्राप्ति के लिए सर्वज्ञ सर्वशक्तिमान दयालु सच्चिदानंदस्वरूप सर्वव्यापी निराकार ईश्वर की उपासना उन गुणों की प्राप्ति के लिए किया करें और उपासक उपासना करते समय अपने आत्मा को सच्चिदानंदस्वरूप परमात्मा के आनंद में निमग्न कर दें और आत्मा परमात्मा के आनंद में निमग्न होकर नर्तन करने लगे लेकिन वह कभी सत्य और चेतन के आधार के बिना प्राप्त नहीं हो सकता। उपासना करते हुए उपासक उपास्य देव से उन गुणों को प्राप्त करके एकरूप हो जाता है।

602 जी. एच. 53, सैक्टर 20
पंचकूला, हरियाणा
मो. 9467608686, 9878748899

☞ पृष्ठ 03 का शेष

“आश्रम व्यवस्था में ...

भूमिकाः वेदविषय)

2. वानप्रस्थ का प्रयोजन

वानप्रस्थ में दीक्षित होने का प्रयोजन आध्यात्मिक, सामाजिक, शारीरिक तथा वैचारिक स्थिति को परिपुष्ट करना है। ईश्वर की उपासना, शारीरिक उन्नति के लिए योगाभ्यास स्पष्टतः वानप्रस्थ का स्वस्थ प्रयोजन है। पारलौकिक उन्नति के लिए मोह त्याग, भोगों के प्रति अनासक्ति, इन्द्रियसंयम, सादा जीवन बिताना आदि नैतिक प्रयोजन हैं। वनस्थ होकर मुनिवृत्ति धारण कर राग, द्वेष, काम, क्रोध, लोभ, मोह, अहंकारादि का परित्याग कर अग्निहोत्र, जप, तप आदि के प्रति निष्ठा तथा वेद का स्वाध्याय रखना वानप्रस्थ के प्रयोजन कहे जा सकते हैं।

गृहस्थ में रहते हुए शारीरिक और मानसिक भोगों को भोग तथा इनकी अनित्यता का अनुभव करके अब नित्य आत्मिक सुखों की प्राप्ति के लिए इन्द्रियों और मन को वश में कर जीतकर स्वाध्याय में नित्य संलग्न रहता है। ईर्ष्या–द्वेष को मन से निकालकर सभी के प्रति मित्रता, दया के भाव रखता है, सबके जीवन के कल्याण के लिए जो ज्ञान और अनुभव उसके पास है उससे वह सभी को लाभान्वित करता है। अपनी आध्यात्मिक उन्नति के लिए सदा सावधान रहता है, दूसरों से कुछ लेता नहीं है अपितु दूसरों को देता ही देता है।

वानप्रस्थ, नागरिक या ग्रामीण जीवन तथा पारिवारिक सदस्यता त्याग कर वन में रहकर तपस्या में दीक्षित होना है। वनस्थ व्यक्ति गृहस्थ में आसक्त व्यक्तित्व एवं इन्द्रियों की बहिर्मुखी मनः प्रवृत्ति को अन्तर्मुखी बनाने की साधना करे तथा धर्मपूर्वक सदैव वैराग्य का अभ्यास करे।

(संस्कारविधि शोध ग्रंथ–डॉ. रविदत्त शास्त्री पृ. 188)

वानप्रस्थाश्रम जीवन को उन्नत बनाने का आश्रम है। यह खोई हुई सम्पत्ति को अर्जित करने का आश्रम है, उच्च भावनाओं के जागरण का आश्रम है, जीवन–लक्ष्य की ओर बढ़ने का आश्रम है, शिक्षा प्रसार का आश्रम है, त्याग एवं तपस्या का आश्रम है और पवित्र साधना का आश्रम है। वानप्रस्थ से तात्पर्य वन में रहना मात्र नहीं है, वानप्रस्थ तो भावनात्मक परिवर्तन का आश्रम है। भावनात्मक परिवर्तन संयम से या वृत्तियों के उन्नयन से होता है। अति संयम कुण्ठाओं को जन्म देता है। किन्तु वृत्तियों का उन्नयन, विचारों का उदात्तीकरण भावनात्मक परिवर्तन लाता है। अब तक वृत्तियाँ घर–परिवार तक सीमित थीं, अब उन वृत्तियों को अभ्यास द्वारा अपने अड़ोस–पड़ोस ही नहीं, मुहल्ले, ग्राम के लोगों में अपनत्व की भावना का विकास करना है। अब तक परिवार के कल्याण की चिन्ता थी, अब परिवार से ऊपर उठकर अन्यों के कल्याण में अपने जीवन को लगाना है। सर्वहिताय जीवन यापन कर **"वसुधैव कुटुम्बकम्"** को साकार बनाने की भावनाओं के उन्नयन के लिए वानप्रस्थाश्रम है। "वानप्रस्थाश्रम जीवन के बीज को सुगन्धित एवं ज्ञान से पूर्ण करने का आश्रम है। आज हमारा देश अनेक समस्याओं से ग्रस्त है। हमारे पूर्वजों ने आश्रम व्यवस्था इन समस्याओं के समाधान के लिए ही रखी थी। वानप्रस्थाश्रम समाज की समस्याओं के समाधान का आश्रम है।"

क्रमशः....

सत्यार्थ प्रकाश न्यास
नवलखा महल
उदय पुर (राजस्थान)

www.thearyasamaj.org

वेदोद्धारक स्वामी दयानन्द

● श्री हरिश्चन्द्र वर्मा 'वैदिक' (कीर्तिशेष)

स्वामी दयानन्द का बचपन का नाम मूलशंकर था, उनको शिवदर्शन की बड़ी लालसा थी। जब वे 14 वर्ष के हुए तब पिता करसन जी की आज्ञा से शिवरात्रि का व्रत रखा। मूलशंकर शिव दर्शन के लिये मन्दिर में रात जागते रहे। अर्धरात्रि के समय जब उन्होंने देखा कि शिवपिंडी पर मूषकों का दल उछल कूद कर रहा है तब उनका पत्थर के शिव पर से विश्वास उठ गया और सच्चे शिव को जानने की उनमें जागृति उत्पन्न हो गई।

उसके पश्चात् छोटी बहिन और स्नेही चाचा की मृत्यु ने उनके मन में वैराग्य का भाव जगा दिया। (इन सब घटनाओं से ऐसा लगता है कि ईश्वरीय नियम उन्हें प्रेरित कर रहा था कि वे उस जगह पहुच जाँय जहाँ वे वेदों को समझकर वैदिक धर्म का प्रचार कर सकें)

अतः शिव दर्शन और मृत्यु पर विजय प्राप्त करने के लिए उन्होंने 1846 में दिव्य ज्ञान की खोज में गृह त्याग दिया। सबसे बचते और अपने को बचाते हुए, निर्विघ्न विद्या एवं आध्यात्म साधना के लिए, शुद्ध चैतन्य स्वामी पूर्णानन्द सरस्वती से संन्यास ग्रहण किया और स्वामी दयानन्द सरस्वती नाम पाया। उनके पश्चात् अनेक प्रकार के योगियों, अद्वितवादियों से मिलते रहे। सच्चे योगियों के खोज में उत्तराखण्ड के शीत प्रधान स्थानों में कठोर–यात्रा की और नर्मदा क्षेत्र का भी भ्रमण किया। परन्तु उन्हें वहाँ भी कहीं सच्चे योगियों का साक्षात्कार न हुआ। इस प्रकार 15 वर्ष तक यथार्थ ज्ञान की खोज में भटकते रहे।

परन्तु 1860 में जब उन्होंने जाना कि मथुरा में स्वामी विरजानन्द दण्डी नाम से एक वृद्ध चक्षु विहीन संन्यासी रहते हैं जो संस्कृत के पण्डित हैं और व्याकरण की पाठशाला चलाते हैं, तब दयानन्द उनकी कुटिया में जा पहुंचे, और गुरु से प्रार्थना किये कि हमें आपके द्वारा सत्यार्थ को जानना है, कृपा करके हमें शिक्षा प्रदान करें। गुरु जी प्रसन्न होकर शिक्षा देने के लिये प्रस्तुत हो गये।

तीन वर्ष के शिक्षण काल में स्वामी दयानन्द को संस्कृत व्याकरण, अष्टध्यायी निरुक्त आदि आर्ष ग्रन्थों की कुंजी और वेदों का सही स्वरूप ज्ञात हो गया। उनसे गुरु जी ने कहा कि वैदिक ग्रन्थों के अनर्थ के कारण सब अवैदिक आचरण आडम्बर, कुसंस्कार, कुरीतियों में फंसे हुए हैं, उन सबको वेदों के सत्यार्थ से सही मार्ग का दर्शन कराना है। स्वामी दयानन्द ने गुरु के इन वचनों के पालन के लिए, अनार्ष का खण्डन एवं आर्ष प्रचार हेतु जीवन अर्पित करने की गुरु दक्षिणा देकर गुरुदेव को प्रणाम किया और मथुरा छोड़ दिया।

स्वामी दयानन्द ने वैदिक धर्म को पुनर्जीवित करने की जो शपथ ली थी यह कार्य अतिदुष्कर था। वे जानते थे कि इस कार्य को आरम्भ करते ही सारा संसार उनके विरुद्ध खड़ा हो जायेगा। ब्राह्मण–पुजारी वर्ग सुधार करने वाले को फूटी–आँख न देखेगा। स्वामी दयानन्द ने एक बार अपने भाषण में कहा था कि मैं कोई नया मत या सम्प्रदाय नहीं चला रहा, मैं तो ब्रह्मा से जैमिनी ऋषि पर्यन्त प्रतिपादित वैदिक धर्म की प्रतिष्ठापना करना चाहता हूँ और उन वेदों को जो हम से पूर्व के भाष्यकारों ने अनर्थ कर डाला है, उनके सत्यार्थ को सबके सामने रखना चाहता हूँ कि वह न बहुदेववाद है, न उसमें कहीं ईश्वर के स्थान पर प्रतिमा पूजन का स्थान है। "डॉ. रूपचन्द दीपक जी ने सन् 2011 के 'आर्य मित्र' दीपावली विशेषांक में लिखा है कि, "स्वामी दयानन्द जब मथुरा छोड़ आगरा आये तब विचारोपरान्त कार्य प्रारम्भ कर दिया। भागवत पुराण जो धर्म के नाम पर एक अनार्षग्रन्थ प्रचलित है, उसके विरुद्ध एक पत्रक छपवाकर पण्डितों को एक झटका दिया। आरम्भ में बड़े पण्डितों ने उनकी उपेक्षा की किन्तु जब उनकी विशिष्ट भाषण–कला और प्रभावशाली तर्कों से जन समूह को आकर्षित होते देखा तो उन्हें चाहे–अनचाहे शास्त्रार्थ समर में कूदना पड़ा। स्वामी दयानन्द की युक्तियाँ इतनी प्रबल थीं कि पारम्परिक पण्डितों को अपनी प्रतिष्ठा बचाना संभव न लगा। पण्डितों ने काशी की पण्डित–मण्डली से शास्त्रीय सहायता की प्रार्थना की किन्तु स्वामी दयानन्द स्वयं ही काशी पहुँच गये और उन्हें शास्त्रार्थ की चुनौती दे दी। वहाँ 16 नवम्बर, 1869 को प्रसिद्ध काशी–शास्त्रार्थ हुआ। शास्त्रार्थ में स्वामी दयानन्द के पक्ष (वेदों में मूर्तिपूजा नहीं है) की विजय हुई थी, किन्तु अध्यक्ष ने चतुराई करके उनके विरुद्ध संकेत कर दिया था। तथापि बुद्धिमान लोग वास्तविकता समझ गये थे और स्वामी दयानन्द के अनुयायी होने लगे थे। स्वामी दयानन्द बाद में भी अनेक बार काशी आये, प्रत्येक बार शास्त्रार्थ की चुनौती दी, किन्तु किसी ने चुनौती स्वीकार न की।"

स्वामी दयानन्द के समय वैदिक सिद्धान्त के विरुद्ध जितने मत–सम्प्रदाय देश में इन पौराणिक धर्मगुरुओं ने फैला रखे थे, उन सबका खण्डन करते हुए सच्चे मार्ग का दर्शन कराते रहे। बाल विवाह निषेध एवं विधवाओं को सारे अधिकार मिले, वेदों को सब कोई पढ़े क्योंकि, **"ब्रह्मराजन्याभ्यांशूद्राय चार्याय च स्वाहा चारणाय"** (ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका–पृ. 456) वेदाधिकार जैसा ब्रह्मण वर्ण के लिये है वैसा ही क्षत्रिय, अर्य=वैश्य, शूद्रपुत्र, भृत्य और अति शूद्र के लिये भी बराबर है। क्योंकि जो विद्या का पुस्तक होता है, वह सबका हितकारक है। इसलिये उसका जानना सब मनुष्यों को उचित है। सब कोई नारी को मातृत्व शक्ति के रूप में समझे। क्योंकि नारी जाति को स्वामी जी पूजनीय मानते थे। उन्होंने 5000 वर्षों के बाद सबल स्वरों में यह घोषित किया कि **"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्तेतत्र देवता।"** बालक–बालिका शिक्षित बने इसके लिये विद्यालय, कन्या विद्यालय खोले जायें ताकि सब कोई शिक्षित होकर एक अच्छे समाज का निर्माण करें।

"न तस्य प्रतिमाऽस्ति यस्य नाम महद्स:" परमेश्वर की कोई प्रतिमामूर्ति नहीं बन सकती जिसका नाम महान यश दायक है। उसकी दैवी शक्तियों की भी मूर्ति नहीं बन सकती, क्या प्राण की, वायु की, मन की, बुद्धि की तथा आत्मा की मूर्ति बन सकती है? जब इन सबकी मूर्ति नहीं बन सकती तो ईश्वर तो अत्यन्त सूक्ष्म और व्यापक है उसकी मूर्ति भला कैसे बन सकती है। और जो ब्राह्मणों के पुराण के अनुसार बनाई जाती है वह सब मन गढ़न्त काल्पनिक है। उन मूर्तियों को उन्हें अमुक देवी–देवता बताकर ब्राह्मण=पुजारी लोग धर्मान्ध लोगों से (उन सबका महत्व वर्णन कर) पूजा करवाते रहते थे और दान दक्षिणा लेते रहते थे।

स्वामी जी के वेद के आधार पर मूर्तिपूजा खण्डन करने पर भी, ब्राह्मण वादियों ने प्रतिमा पूजन को नहीं छोड़ा, ये लोग नहीं चाहते थे कि कोई वैदिक धर्म के सत्यार्थ को समझे।

स्वामी जी सभी को सामग्रियों से यज्ञ करने का आदेश देते रहे ताकि वायु आदि का शोधन होता रहे। ईश्वरानन्द की प्राप्ति के लिये सन्ध्योपासना और योगाभ्यास करने के विधि–विधान 'संस्कार विधि' और 'सत्यार्थ प्रकाश' में प्रस्तुत कर दिये।

स्वामी जी चाहते थे कि सब जाति भेद मिटाकर कर्मगत जाति को स्वीकार करें, ब्राह्मणों की चलाई हुए जन्मगत को नहीं। इस प्रकार स्वामी दयानन्द ने अनेक सुधार कार्य किये और धर्म को समझने के लिये 'सत्यार्थ प्रकाश' की रचना कर दी ताकि सब कोई धर्म सम्बन्धी सत्यासत्य का निर्णय कर सकें।

स्वामी जी ने 1875 में आर्य समाज की स्थापना, इसलिये की जिससे आर्य समाज की प्रगति होती रहे और विद्व ज्जन देश–विदेश में जाकर सबको वैदिक धर्म से परिचय करावें ताकि देश में फैली हुए कुरीतियों, कुसंस्करों को दूर तक सभी को सच्चे मार्ग का दर्शन कराते रहें। अतः उस समय स्वामीजी के पथ का अनुसरण करते हुए हमारे पूर्वजों ने वैदिक धर्म के प्रचार प्रसार में अपना सर्वस्व लगा दिया, फलतः सभी क्षेत्रों में सफलता चरण चूमने लगी थी। विद्या का प्रकाश फैल रहा था। नारी का शोषण थम गया था। सबमें नव चेतना आने लगी थी, स्वाभिमान जाग उठा था। गुरुडम, पाखण्ड पर अंकुश लगने लगा था। इस प्रकार आर्य समाज की उन्नति महात्मा आनन्द स्वामी तक होती रही, उसके बाद से आर्य समाज का आन्दोलन कम होता गया। हमारी रुचि मन्द होती गई, आपस के पद व धनलिप्सा ने आर्य समाज को कमजोर बना दिया, अब वह प्रतिभा नहीं रह गयी है इसीलिए तो ब्राह्मणवाद पौराणिकता की बन पड़ी है, अध्यात्म के नाम पर विविध टी.वी. के चैनलों पर उपदेश सुनाये जाते हैं, परन्तु उनमें अध्यात्म के नाम पर गुरुडम फैलाया जा रहा है। इसके अलावा 'पीस' चैनेल पर वैदिक धर्म की मनमानी व्याख्या की जा रही है। जिन वेदों को विद्या की पुस्तक कहा जाता है, उसकी गलत व्याख्या करना अल्पज्ञता है। सबको उचित है कि यथार्थ को समझा करें।

मु. पो. मुरारई,
जि. वीरभूम (प. बंगाल– 731219)
मो. 8158078011

www.thearyasamaj.org

मुक्ति

● अशोक जौहरी

यह घटना कुछ समय पूर्व की है। प्रतिदिन की भांति मैं पूजा करके उठा ही था कि मेरी धर्मपत्नी ने एक शादी का निमन्त्रण पत्र पकड़ा दिया। वह पत्र किसी दूर के सम्बन्धी ने भेजा था। इस पत्र को देखकर कई पुरानी यादें ताजा हो गईं। मेरे हृदय पटल पर कई प्रिय व अप्रिय घटनाएं स्मृत हो गईं। श्रीमती जी के हर्ष का पारावार न था। परन्तु मैं एक गम्भीर स्वभाव का व्यक्ति हूँ। मेरा मन किसी गहन चिंता में डूब गया। मेरे चेहरे पर कोई प्रतिक्रिया न देखकर श्रीमती जी विस्मित हो गईं। यह तुम्हारा कैसा मित्र है जिसके निमन्त्रण को पाकर तुममें कोई उत्साह नहीं है। मैंने इशारे से एकान्त में छोड़ने को कहा। मेरी पत्नी मेरे स्वभाव से भली–भांति परिचित थी। अतः वह कमरे से चली गई। अक्सर मैं बात करते–करते गंभीर हो जाता हूँ। मेरे मन में अब कई प्रश्न उभर रहे थे। जैसे यह निमंत्रण क्यों भेजा है? इसके लिये मुझे क्यों चुना गया है। इसकी कसौटी क्या है? साधारणतया इसे भेजने से पूर्व अमुक व्यक्ति का परिचय आवश्यक है। यह अपेक्षा की जाती है कि उस व्यक्ति का चरित्र उज्ज्वल हो। मृदुल स्वभाव, मिलन सार व व्यवहार कुशल हो। अब प्रश्न उठता है कि उस व्यक्ति का परिचय आडम्बर पूर्ण हो सकता है। यह अपनी वास्तविकता को छिपाकर अच्छे स्वभाव का नाटक कर रहा हो। इसका अर्थ यह है कि परिचय अस्थाई है। हमारा स्वभाव समय व परिस्थिति के अनुसार परिवर्तित होता रहता है। उदाहरण के तौर पर बाल्यकाल में बालक का स्वभाव व आदतें व शरारतें बड़ी भली लगती हैं। वह सबका दुलारा होता है। परन्तु वही आदतें उसकी किशोर अवस्था में हो तो बच्चा आलोचना का शिकार हो जावेगा अर्थात् समय अनुसार उसको आदतें बदलनी पड़ेंगी। अभिभावक भी उसकी बचकानी हरकत पर उसको डाँटेंगे। परिणाम स्वरूप वह बच्चा अब उद्दण्ड व झगड़ालू स्वभाव का हो जायेगा। अब उसका परिचय भी बदल जाएगा अर्थात् हमारा परिचय काल व परिस्थिति के अनुसार बदलता रहता है। ऐसे परिचय वाले व्यक्ति को समाज में आदर भी नहीं मिलता व उसको किसी भी उत्सव में निमंत्रण भी नहीं मिलता अर्थात् मनुष्य का परिचय हर समय बदलता रहता है। उस तरह यह निमन्त्रण भी अस्थाई हुआ। दूसरी बात जब हम किसी उत्सव में सम्मिलित होते हैं तो कुछ समय तक ही हमें आदर, सम्मान मिलता है। अतिथि से उम्मीद की जाती है कि वह कुछ समय बाद स्वयं ही चला जावे। अगर वह कुछ दिन रुक जावे तो उसके आदर सत्कार में कमी आ जायेगी। अर्थात् यह निमन्त्रण भी अस्थाई हुआ।

इसके विपरीत जो निमंत्रण ईश्वर से मिलता वह स्थाई होता है। अर्थात् ईश्वर के सान्निध्य में हम सदा साथ रह सकते हैं। दूसरे अर्थों में स्थाई निमन्त्रण जो ईश्वर से प्राप्त होता है वही वास्तव में मुक्ति होती है। जहाँ जीव अत्यन्त आनन्दित रहता है। कोई कष्ट व क्लेश नहीं होता। अब प्रश्न उठता है कि स्थाई निमन्त्रण के अधिकारी कौन लोग होते हैं? अर्थात् ईश्वर किन लोगों को चुनता है?

इस वृद्ध अवस्था में जाने पर मुझे भी स्थाई निमन्त्रण पाने की तीव्र इच्छा जागृत हुई। मेरे मन में भी अन्तर्द्वंद्व शुरू हो गया। मैंने इस निमन्त्रण को पाने की ठान ली।

कई बाबाओं व गुरुओं से पूछा। किसी को भी स्थाई परिचय का अर्थ ही नहीं मालूम था। सरलता की दृष्टि से मैंने उनसे मुक्ति का मार्ग पूछा। अच्छे कार्य करो, मन्दिर में जाओ, भजन–कीर्तन करो और भगवान का गुणगान करो, दिल खोल कर दान करो। इससे ही शान्ति मिल जावेगी व मुक्ति मिलेगी। अब प्रश्न उठता है जो व्यक्ति परोपकारी बनने का ढोंग रचता हो व किसी धनाढ्य व्यक्ति ने अनुचित साधन से धन अर्जित किया हो वह व्यक्ति कितना भी परोपकार करे, मन्दिर में दान करे, जिसकी कथनी व करनी में अन्तर हो वह व्यक्ति येन–केन प्रकारेण संसार में सम्मान प्राप्त कर सकता है परन्तु सच्चे परिचय का अधिकारी कदापि न होगा। इनमें वे गुरु व बाबा भी आते हैं जिनका उद्देश्य सिर्फ धन कमाना हो और अपने भक्तों को सिर्फ भजन–कीर्तन करके मन्दिर में ढेर सारा चढ़ावा चढ़ाने को प्रेरित करते हों और स्वयं भक्तों से धन अर्जित कर विलासितापूर्ण जीवन जीते हों। क्या ये ढोंगी बाबा मुक्ति के अधिकारी होंगे?

मेरी स्थाई निमन्त्रण पाने की आतुरता देखकर मेरे मित्र ने एक स्वामी जी का पता बताया। बोले स्वामी जी अधिकतर समाधिस्थ रहते हैं। वह अधिक किसी से नहीं मिलते। अधिकांश समय साधना में लीन रहते हैं। प्रयत्न करके देखो। मैं उनको खोजते–खोजते एक निर्जन स्थान पर गया वह स्वामी जी घोर साधना में डूबे हुए थे। उनके माथे से तेज चमक रहा था। घंटों बीत गये परन्तु उन्होंने आँखें न खोलीं। सुबह से शाम हो गई। मेरे मन में अजीब सी बेचैनी घर कर गई। कहीं मुझे यहाँ से भी निराश न होना पड़े। उनकी समाधि है जो टूटती ही नहीं। अभी उठने का उपक्रम कर ही रहा था कि उन्होंने आंखें खोलीं और इशारे से बैठने को कहा। गम्भीर स्वर में बोले भी वत्स कैसे आना हुआ? उनके स्वर में विचित्र आकर्षण था। मुझे अपार शान्ति का आभास हुआ। जैसे मेरी सब थकान मिट गई हो। मैं नतमस्तक हो गया और बोला स्वामी जी मुझे मुक्ति कैसे मिल सकती है? उसके लिये मुझे क्या करना होगा? वह मुस्कराये व उन्होंने मेरा स्थाई परिचय पूछा। मैं मौन ही रहा। इसका कोई उत्तर मेरे पास न था। बोले जाओ अपनी आत्मा से पूछो। वह फिर मौन हो गए और जाने का इशारा किया। मैं जहाँ से चला था वहीं आ गया।

अगले दिन मेरा प्रार्थना में दिल न लगा। जैसे मैं मन ही मन आत्मा का द्वार खटखटा रहा हूँ। उससे स्थाई परिचय का मार्ग पूछ रहा होऊँ। मुझे आत्मा के अन्दर प्रवेश इतनी मनुहार करने पर भी नहीं मिला। द्वार बन्द ही थे। थोड़ी देर बाद मुझे क्षीण–सी आवाज सुनाई दी। पहले मन को पवित्र करो। अर्थात् लोभ, क्रोध, मोह, तृष्णा, वैर–भाव को त्यागों, सब इच्छाओं को बलपूर्वक मन से निकाल दो तब मेरे पास आना।

आत्मा की इस आवाज ने जैसे जादू कर दिया। मैं आत्म विश्वास से भर गया। मैंने संकल्प किया कि अभी से समस्त विकारों को दूर करने का यथाशक्ति प्रयास करूँगा। यह कार्य इतना आसान भी न था। इसमें दृढ़ विश्वास व आत्म बल की आवश्यकता होती है। मनुष्य को सदा इन विकारों को दूर करने के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। कुछ अन्तराल के बाद मुझे आत्मा की आवाज स्पष्ट सुनाई पड़ रही थी। जैसे निराशारूपी परजन्य मिट गये हों और आत्मा का तीव्र प्रकाश सूर्य की भाँति चमक रहा हो। उसके निर्देश अब स्पष्ट सुनाई दे रहे थे। दूसरों के छिद्र ढूढ़ने से पूर्व अपनी आत्मा से अपने विकारों का मंथन करो। इसके लिये ईश्वर की सच्ची भक्ति करो। अर्थात् हमें ईश्वर की इच्छानुसार ही कार्य करने चाहिये। अब प्रश्न यह उठता है कि हमें भक्ति क्यों व कैसे करनी चाहिए व ईश्वर का इस मानव जाति को उत्पन्न करने का उद्देश्य क्या है? उनकी अपेक्षाएं क्या हैं? इसमें वेद मन्त्र काफी सहायक होंगे। अपने मन को स्वच्छ करके चित्त में ईश्वर को स्थापित करना तथा दृढ़ इच्छा शक्ति से ईश्वर की प्राप्ति के लिये सदा प्रयास करना।

इसमें ऋग्वेद के निम्नलिखित मंत्र सहायक होंगे।

(1) **प्रातरग्निं प्रातरिन्द्रं हवामहे प्रातर्मित्रा वरुणा प्रातरश्विना।**

(2) **प्रात्रर्जितं भग्रमुगं हुवेम वयं पुत्रमदितेर्योविधर्ता।**

(3) **अध्रश्चिद्यं मनमानस्तुरश्चिद्राजा चिद्य भगं भक्षत्याह।**

(4) **उतेदानीं भगवन्तः स्यामोत् प्रपित्त्व उते मध्ये आह्नाम।**

उतोदिता भघवन्तसूर्यस्य वयं देवानाम् सुमतौ स्याम्।

भग ए भगवा देवास्तेन वयमं भगवन्ता स्याम।

तं त्वा भग सर्व इज्जोह्वीत स नो भगपुरएता भवेह।

(ऋग्वेद मं १ से ५)

(1) सबसे पहले मंत्र में ऋषि कहते हैं–हमें सुबह उठकर ईश्वर का आभार प्रकट करना चाहिये। रात्रि सकुशल बीत गई इसके लिए धन्यवाद। सुबह की उषाकाल ने जो ईश्वर प्रदत्त जीवनदायनी संस्थायें जैसे वायु, अग्नि, आकाश , जल व पृथ्वी यह सब क्षेणै क्षेणै क्षीण हो रही है इनका हमें ईश्वर का ऋण समझकर उपयोग करना चाहिये अर्थात् इसका सदा सदुपयोग करना चाहिए। कभी व्यर्थ नहीं करना चाहिए और इन सबके लिए सदा इससे उऋण होने का जीवन पर्यन्त प्रयास करना चाहिए। ऋषि इतने वर्ष पूर्व पर्यावरण के प्रति बड़े जागरूक थे।

(2) मंत्र में ऋषि कहते हैं हमें अपने को सदा कुत्सित विचारों व समस्त विकारों को अपनी संकल्प शक्ति द्वारा दूर रखना चाहिए। यह ईश्वर की भक्ति में बाधक है। ईश्वर की प्राप्ति की अभिलाषा लिये अपने चित्त में उनको स्थापित करना चाहिए। सभी तृष्णा व इच्छाओं को सदा त्याग करना चाहिए।

(3) तीसरे मंत्र में ऋषि कहते हैं कि हमें ईश्वर से कभी भौतिक सुखों की कामना नहीं करना चाहिए क्योंकि इच्छाओं का कभी अन्त नहीं होता। ये सुरसा की भांति बढ़ती रहती हैं। जो लोग भौतिक सुख की कामना करते हैं। वे सदा दुखी ही रहते हैं। आत्म संतोष की इच्छा सुख देती है।

आप चाहे मन्दिर में जावे या स्वयं मन में ईश्वर को स्थापित कर भक्ति करें उस समय ईश्वर से **देवास्तेन वयं** की कामना करनी चाहिए। अर्थात् ईश्वर देवताओं के आत्मिक गुण जैसे परोपकारी मित्र भाव, उदारता, दान व विनीत भाव जैसे गुण अपने अन्दर विकसित करने की कामना करनी चाहिये। सच मानिए जब हम ईश्वर के सम्मुख उपरोक्त भाव से जाते हैं तो ईश्वर दयालु, न्यायप्रिय, विशाल हृदय, असीम सहनशील हैं वह आपको ये गुण सहर्ष दान स्वरूप देते हैं। आपने महसूस किया होगा कि जब आप किसी तीर्थ स्थान व देवालय में जाते हैं तो आपको असीम शान्ति मिलती है। उस समय आप सब सुख दुःख भूल जाते हैं। परन्तु उन स्थानों को छोड़ने के बाद फिर दुःखों से भर जाते हैं। इसका कारण यह है कि हम ईश्वर के सामने इन सब गुणों को विकसित करने का संकल्प लेते हैं। उसको जब तक कर्मयोग की कसौटी पर न कसें तब तक सच्चे अर्थों में यह विकसित ही नहीं हुए। कर्म योग ही वह पारस मणि है जिसके उपयोग से मनुष्य को स्थाई परिचय मिल सकता है। इसमें आत्मा का अनुमोदन आवश्यक है क्योंकि आत्मा के आगे कोई भी आडम्बर नहीं चलता। वह हमारे सारे कार्यकलापों को देख रही होती है।

भगवद्गीता में श्री कृष्ण ने भक्तों को कर्मयोगी बनने को कहा है। सच जानिये भक्ति योग व कर्मयोग मिलकर ही ईश्वर की भक्ति सम्पूर्ण होती है।

श्री कृष्ण कहते हैं मनुष्य तुम सच्चे कर्म योगी बनो। भक्ति योग व कर्म योग रथ के दो चक्र के समान हैं जिनकी सहायता से हमारा रथ दुत गति से ईश्वर की प्राप्ति के मार्ग पर बढ़ता है।

अब प्रश्न उठता है कर्मयोग में कौन से कर्म सहायक हैं? भगवद् गीता के अनुसार यज्ञ, तप और दान का बहुत महत्त्व है। ये सब सात्विक होने चाहिए तथा फल की इच्छा सर्वथा त्याग देनी चाहिए।

शेष पृष्ठ 09 पर ☞

www.thearyasamaj.org

मेरी नैरोबी यात्रा

● श्री मामचन्द रिवाड़िया

संसार में प्रथम बार आर्य समाज का विश्व आर्य महासम्मेलन 1973 में मोरिशस में हुआ जिसमें भाग लेने का मुझे भी अवसर प्राप्त हुआ। जब मैंने सुना कि 1978 में विश्व आर्य महासम्मेलन पूर्वी अफ्रीका के देश केन्या की राजधानी नैरोबी में होने जा रहा है तो मन ही मन मैंने भी जाने का निर्णय किया। मुझे मालूम हुआ कि हमारे आर्य समाज के दो उपप्रधान सर्वश्री देवराज गुप्ता एवं श्री दीवानचंद पलटा भी नैरोबी जा रहे हैं तो मैंने भी सम्मेलन में भाग लेने का निर्णय किया और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा के कार्यालय में जाकर अपनी सीट आरक्षित करा ली।

12–9–1978 को नैरोबी के लिए दिल्ली से 50 व्यक्तियों का एक दल पालम हवाई अड्डे से रवाना हुआ। लगभग सभी यात्री संध्या 7.30 बजे पालम हवाई अड्डे पर एकत्रित हो गए। मुझे विदाई देने के लिए मेरे कुटुम्बियों तथा रिश्तेदारों के अतिरिक्त समाज के कोषाध्यक्ष श्री बाबूराम आर्य तथा समाज के कर्मठ एवं निष्ठावान कार्यकर्त्ता भाई श्री नरेन्द्र गुप्ता अपने सुपुत्र के साथ उपस्थित थे। सार्वदेशिक आर्य महासभा के महामंत्री श्री ओमप्रकाश पुरुषार्थी, संसद सदस्य (लोक सभा) भी हवाई अड्डे पर उपस्थित थे। स्वामी ओमानन्द जी तथा सार्वदेशिक आर्य सभा के उप मंत्री श्री सच्चिदानन्द शास्त्री एवं कोषाध्यक्ष श्री मरवाह भी हमारे साथ सहयात्री थे। ठीक 8.30 बजे हमारी जाँच पड़ताल हुई और उसके बाद हम बस में बैठ कर हवाई जहाज तक गए और जहाज में सवार हो गए। जब हम जहाज के अन्दर गए तब हमें मालूम हुआ कि यह एयर बस है। यह सब प्रकार से दर्शनीय तथा सुखदायक थी। एयर बस पालम हवाई अड्डे से ठीक 9 बजे रवाना हुई। 9.15 पर हमें नाश्ता दिया गया जो बहुत स्वादिष्ट था। एयर होस्टेस का व्यवहार बहुत अच्छा था। नाश्ता लेते–लेते ही बम्बई के नजदीक पहुँच गए। रात्रि के समय एयर बस की खिड़कियों से झाँककर देखने पर बम्बई नव दुल्हन की तरह सजी हुई दिखाई देती थी। ठीक 10 बजे हम सभी सांताक्रूज हवाई अड्डे पर पहुँचे। बस द्वारा हम प्लेट फार्म पर पहुँचे जहाँ पर बम्बई के आर्य बन्धुओं ने हमारा स्वागत किया। इस अवसर पर श्री देवराज जी के सम्बन्धी एवं श्री पलटा जी के सुपुत्र श्री सतीश पलटा जी भी वहाँ उपस्थित थे। सांताक्रूज एयरपोर्ट से हम कार द्वारा श्री चमनलाल अग्रवाल, चेम्बूर निवासी के घर पर रात्रि को विश्राम के लिए पहुँचे और वहाँ पर हमने भोजन किया।

13–9–1978 को प्रातः 5.30 बजे उठ कर स्नान आदि के पश्चात नाश्ता किया और श्री चमनलाल अग्रवाल जी के पुत्र हमें अपनी कार में बैठा कर सान्ताक्रूज एयर पोर्ट पर छोड़ने के लिए गए। चैकिंग आदि होने के बाद 8.15 बजे हम जहाज पर नैरोबी के लिए सवार हुए। जहाज का नाम बोइंग 707–337 बी मकालू था। 8.40 पर जहाज चला। काफी दूर तक वह सड़क पर चलता रहा और 9.05 मिनट पर वह आकाश में उड़ने लगा। सौभाग्य से मेरी सीट खिड़की के पास थी। जिसके कारण मैं बाहर का दृश्य बड़ी आसानी से देखता रहा। जहाज से बम्बई की बड़ी–इमारतें तथा समुद्र का दृश्य बड़ा ही सुन्दर दिखाई देता था जिसका वर्णन शब्दों में करना कठिन है। कुछ ही क्षणों में जहाज ने गति पकड़ ली और देखते ही देखते बम्बई अदृश्य हो गई। जहाज बादलों को चीरता हुआ उनके ऊपर उड़ने लगा। जहाज की खिड़की से मैंने देखा कि हम बादलों से काफी ऊपर उड़ रहे हैं। बादल रूई के बड़े–बड़े गोलों की तरह दिखाई देता था और समुद्र आकाश–सा दिखाई देता था। संक्षेप में, हमें पृथ्वी का नीला रूप दिखाई देता था और कोई हिस्सा दिखाई नहीं देता था। जहाज के कैप्टन श्री सी. एल. गुप्ता के पास जब मैं गया तो उन्होंने बताया कि इस समय जहाज 35 हजार 500 फीट की ऊँचाई पर उड़ रहा है। ऊँचाई का अनुमान आप इस बात से लगा सकते हैं कि एवरेस्ट की चोटी की ऊँचाई 29 हजार कुछ फीट है। एक हजार 90 किलोमीटर प्रति घंटे की रफ्तार से हमारा जहाज उड़ रहा था। कैप्टन ने मुझे जहाज के मुख्य–मुख्य यंत्रों से अवगत कराया जो मुझे बड़े ही रुचिकर लगे। मुझे उस जगह भी बैठाया गया जहाँ से जहाज को नियंत्रित किया जाता है। मुझे बताया गया कि हम माउंट क्लेमिष्ट जारो पहाड़ के ऊपर से गुजर रहे हैं। सारे रास्ते जहाज में एयर होस्टेस का व्यवहार सुन्दर रहा। नाश्ता इतना देती थी जो खाया नहीं जाता था। नाश्ता स्वादिष्ट एवं पौष्टिक होता था। एयर होस्टेस जब जहाज में एक ट्रोली पर शराब की बोतलें बेचने आई तो मैंने उससे प्रार्थना की कि वे शराब की बोतलों का प्रदर्शन इस प्रकार न करें। उन्होंने मेरी बात स्वीकार की और वह स्टोर रूम वापस चली गई। ठीक दोपहर के 2.15 मिनट पर हम नैरोबी हवाई अड्डे आ पहुँचे। बम्बई से नैरोबी की हवाई यात्रा सुखद रही।

नैरोबी एयर पोर्ट पर हमारी साधारण चैकिंग हुई। मेरे पास पाँच सेब थे जो उन्होंने बाहर नहीं ले जाने दिए। तब मैंने उनसे ही प्रार्थना की कि मैं आपको भेंट करता हूँ जिन्हें उन्होंने स्वीकार कर लिया। प्लेटफार्म के बाहर आने पर नैरोबी आर्य समाज के पदाधिकारी एवं सदस्यगण भारी संख्या में हमारे स्वागतार्थ खड़े थे। उनमें स्वामी सत्य प्रकाश जी महाराज, श्री सत्यदेव जी और उनका परिवार एवं पं. सत्यपाल जी भी थे। वहाँ पर काफी संख्या में कारें खड़ी थीं जो हमें दयानन्द होम एवेन्यू पार्क लेन ले गई। मैं श्री अमर नाथ फक्के की कार में बैठा हुआ था। ड्राइवर महोदय हमें रास्ते में स्थानों से अवगत कराता चल रहा था। जब हम नैरोबी की एक सड़क पर चल रहे थे तब हमें कुछ फासले पर ऐसा लगता था जैसे वहाँ पानी की झील हो लेकिन वास्तव में वहाँ पानी की एक बूंद भी न थी। दयानन्द होम पहुँचने पर हमें एक स्कूल में ठहराया गया जहाँ पर लोहे के स्प्रिंगदार पंलगों पर फौम के गद्दे तथा तकिए तथा दो कम्बल पहले से ही रखे हुए थे। जिस कमरे में मैं ठहरा हुआ था उसी में हमारे दोनों उप प्रधान, नया बाँस आर्य समाज के प्रधान श्री प्रेम चन्द गोयल तथा श्री क्षितीश कुमार जी वेदालंकार भी ठहरे हुए थे। ठहरने का इतना सुन्दर प्रबन्ध देखकर अनायास ही हम सबके मुँह से निकला कि हमारी नैरोबी यात्रा अवश्य ही सुखमय एवं शिक्षाप्रद रहेगी। थोड़ी देर बाद नैरोबी आर्य समाज के नवयुवक उत्साही मंत्री श्री सत्य भूषण भारद्वाज हमारे ठहरने की व्यवस्था को देखने के लिए पधारे और हमारी आवश्यकताओं के सम्बन्ध में जानकारी प्राप्त की।

थोड़ा विश्राम करने के पश्चात् संध्या करने के लिए हम सब 5.30 बजे महेन्द्र पाल हॉल में एकत्रित हुए जो स्कूल के पास है। यज्ञ में अच्छी उपस्थिति थी, फौम के गद्दे बिछे हुए थे और साइड में कुर्सियाँ लगी हुई थीं। पं. सत्यपाल जी की अध्यक्षता में यज्ञ प्रारम्भ हुआ और अन्त में श्री ओमानन्द जी का सारगर्भित व्याख्यान हुआ। श्रीमती प्रकाशवती जी के सुन्दर भजन से हम सभी प्रभावित हुए। नैरोबी आर्य समाज के प्रधान श्री सेठी जी एवं स्त्री समाज की प्रधाना श्रीमती शकुन्तला खोसला जी वृद्ध होते हुए भी बहुत उत्साहपूर्वक कार्य कर रही थीं।

14–9–1978– आज हम प्रातःकाल यज्ञ एवं जलपान आदि से निवृत्त होकर कार द्वारा वैदिक हाऊस गए जहाँ हमने बरक्ले बैंक से अपने डॉलर भुनाए। इसके बाद हम वैदिक हाऊस गए। वैदिक हाऊस सात मंजिला सुन्दर भवन है। इस भवन से आर्य समाज को एक लाख रुपए मासिक किराए की आय होती है। सातवीं मंजिल पर समाज का कार्यालय है। यहाँ से मैं और श्री देवराज जी नैरोबी के बाजारों में घूमने के लिए निकल पड़े। मुख्य स्थान निम्न प्रकार हैं–

1. बबेरा स्टेट–यह सुन्दर तथा भीड़ वाला स्थान है। यहाँ पर काफी चहल–पहल रहती है। बड़ी–बड़ी बिल्डिंगें हैं। यहाँ पर हमारी भेंट नैरोबी के एक वकील श्री एस.पी. वैद्य से हुई जो हमें कॉफी हाऊस ले गए और वहाँ कॉफी पिलाई और नैरोबी एवं केनिया के सम्बन्ध में काफी जानकारी दी।

2. केन्याटा कान्फ्रेंस बिल्डिंग–यह नैरोबी की सबसे सुन्दर तथा ऊँची 28 मंजिला बिल्डिंग है। द्वार पर सिक्यूरिटी आफिसर खड़ा था। उससे पता करके हम लिफ्ट द्वारा 27वीं मंजिल पर पहुँचे। वहाँ पर एक सुन्दर लाट्योर नामक रेस्टोरेन्ट है जहाँ पर औरत–मर्द बैठे जलपान कर रहे थे। जैसे ही हम कुर्सियों पर बैठे वैसे ही मीनू के साथ बैरा आया और आर्डर माँगा। मालूम करने पर पता चला कि यदि हम ऊपर जहाँ पर रिवोल्विंग रेस्टोरेन्ट है वहाँ जाना चाहें तो पहले ड्रिंक करना होगा। यह सुनकर हम तीनों बड़े असमंजस में पड़ गए। हमने बैरे से कहा कि अपने किसी अधिकारी को बुलाओ। अधिकारी महोदय के आने पर हमने उससे शराब पीने में अपनी असमर्थता प्रकट की। अन्त में निर्णय हुआ कि यदि हम फ्रूट जूस ले लें तो हमें बिना शराब पिए ऊपर जाने की अनुमति मिल सकती है। हमने तीन गिलास औरेन्ज जूस मँगाया और 17 शिलिंग का बिल अदा करना पड़ा। जूस पीने के बाद हम ऊपर की मंजिल पर गए जहाँ पर होटल घूम रहा था। हम कुर्सियों पर बैठ गए। डायनिंग टेबल हमारे सामने रखी थी। वहाँ पर सुन्दर–सुन्दर क्राकरी रखी हुई थी और दो प्लेटों में मक्खन रखा हुआ था। बैरा मीनू के साथ हमारे पास आया और आर्डर माँगा। हमने तीन वैजीटेबल कटलेट्स का आर्डर दिया। बैरा सामान ले आया और सॉस आदि की प्लेटें हमारे सामने रख गया। हमने लगभग दो घंटे में सामग्री को समाप्त किया। कई बार कुर्सियों पर बैठे–बैठे लाट्योर रेस्टोरेन्ट के चक्कर लगाए। वहाँ से हमें सारे नैरोबी का दृश्य बहुत ही सुन्दर दिखाई देता था जिसे मैं शब्दों में नहीं बाँध सकता। वैजीटेबल कटलेट्स स्वादिष्ट थे लेकिन जब 98

शेष पृष्ठ 08 पर ☞

www.thearyasamaj.org

पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा

संस्कृत के अद्वितीय पण्डित, स्वामी दयानन्द के प्रत्यक्ष शिष्य, सशस्त्र क्रांतिकारी आन्दोलन के आद्य प्रवर्तक पं. श्यामजी कृष्ण वर्मा का जन्म 4 अक्टूबर 1857 को गुजरात के कच्छ जिले के माण्डवी नामक कस्बे में हुआ था। इनके पिता का नाम करसनजी था जो भणशाली जाति के वैश्य थे। इनकी आर्थिक स्थिति बहुत अच्छी नहीं थी, तथापि उन्होंने अपने पुत्र श्यामजी को अध्ययन के लिए पहले कच्छ राज्य की राजधानी भुज तथा उसके पश्चात् बम्बई भेजा। बम्बई में उन्होंने विख्यात विल्सन हाई स्कूल तथा एलफिस्टन हाई स्कूल में अध्ययन किया। इन्हीं दिनों उनका परिचय एक धनाढ्य भाटिया सेठ छबीलदास लल्लूभाई से हुआ। कालान्तर में इसी सेठ की पुत्री भानुमति से श्यामजी का विवाह 1875 ई. में हो गया।

जब स्वामी दयानन्द बम्बई आये तो उनकी भेंट इस होनहार, प्रतिभाशाली युवक से हुई। श्यामजी ने भी स्वामीजी के प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा विचारों से प्रेरणा ली और उनके दृढ़ अनुयायी बन गये। अब उन्होंने संस्कृत का विशद अध्ययन किया और इस भाषा पर असाधारण अधिकार प्राप्त कर लिया। इसी बीच उन्हें ऑक्सफोर्ड विश्वविद्यालय में संस्कृत के प्रोफेसर मोनियर विलियम्स का प्रस्ताव मिला जिसके अनुसार उन्हें ऑक्सफोर्ड में रह कर उनके शोध सहायक के रूप में कार्य करना था। यद्यपि विदेश यात्रा के लिए उनके पास पर्याप्त आर्थिक साधन भी नहीं थे, तथापि स्वामी दयानन्द से उत्साहित होकर तथा इंग्लैण्ड जाने के सम्बन्ध में उनकी पूर्ण सहमति देखकर श्यामजी ने ऑक्सफोर्ड जाने का दृढ़ निश्चय कर लिया। इससे पूर्व उन्होंने बम्बई में रहते हुए स्वामी दयानन्द के निर्णयसागर प्रेस मुम्बई से मुद्रित और प्रकाशित होने वाले वेदभाष्य की व्यवस्था को भी भली भांति सम्भाला। उनसे पूर्व स्वामीजी के वेदभाष्य के मुद्रण एवं प्रकाशन की व्यवस्था श्री हरिश्चन्द्र चिन्तामणि देखा करते थे, किन्तु उनके कार्य को सन्तोषजनक न पाकर ही स्वामी दयानन्द ने श्यामजी के जिम्मे यह काम सौंपा था।

ऑक्सफोर्ड में रहकर श्यामजी ने केवल बेलॉइल कॉलेज से बी.ए. की परीक्षा ही उत्तीर्ण नहीं की, किन्तु कुछ समय पश्चात् उन्होंने बैरिस्टरी भी पास कर ली। इंग्लैण्ड प्रवास के समय उनका स्वामी दयानन्द से नियमित पत्र–व्यवहार होता रहता था। 13 जुलाई 1880 को संस्कृत में लिखे अपने पत्र में स्वामी दयानन्द ने श्यामजी से इंग्लैण्ड में उनके निवास तथा कार्य के सम्बन्ध में अनेक बातें पूछी थीं। इसमें उन्होंने श्यामजी को बताया कि धन लाभ की अपेक्षा कीर्ति लाभ मनुष्य के लिए अतीव हितकारी होता है। उन्होंने उनसे यह भी जानना चाहा था कि प्रो. मोनियर विलियम्स तथा अध्यापक मैक्समूलर आदि विद्वान वेदों के बारे में सम्पति क्या धारणा रखते हैं? उन्होंने यह भी जिज्ञासा की थी कि क्या उन्हें महारानी विक्टोरिया का दर्शन लाभ तथा ब्रिटिश पार्लियामेंट को देखने का अवसर प्राप्त हुआ है या नहीं? 25 सितम्बर 1880 को लिखा गया स्वामीजी का पत्र तो संस्कृत के 21 पद्यों में निबद्ध है। इसमें उन्होंने मोनियर विलियम्स को उनका नमस्ते निवेदन करने के लिए लिखा तथा भारत में अपनी प्रवृत्तियों के विषय में श्यामजी को अवगत कराया।

स्वदेश लौटकर श्यामजी कृष्ण वर्मा ने रतलाम, उदयपुर, जूनागढ़ आदि रजवाड़ों में प्रधानमन्त्री तथा दीवान जैसे उच्च पदों पर कार्य किया किन्तु देशी रियासतों के नियंत्रक अंग्रेज़ी रेजिडेन्टों तथा अन्य अधिकारियों से उनकी पटरी कभी नहीं बैठी। श्यामजी स्वभाव से ही स्वतंत्रताप्रिय तथा देश की स्वाधीनता के सम्बन्ध में अत्यन्त क्रांतिकारी विचार रखते थे। जब उन्होंने यह अनुभव किया कि भारत में रहकर वे न तो देश की स्वतंत्रता के लिए अपने प्रयत्नों को जारी रख सकते हैं और न खुलकर अपने विचारों को अभिव्यक्त ही कर सकते हैं, तो उन्होंने 1897 में इंग्लैण्ड के लिए प्रस्थान किया। पर्याप्त समय तक वे लंदन में रहकर अपनी क्रान्तिकारी गतिविधियों का संचालन करते रहे, किन्तु जब अंग्रेज़ शासकों ने उनकी प्रवृत्तियों के प्रति नाराजगी दिखानी आरम्भ की, तो वे फ्रांस की राजधानी पेरिस चले गये। यहाँ से उन्होंने इण्डियन सोशियोलोजिस्ट नामक पत्र निकाला और उसके माध्यम से अपने उग्र राजनैतिक विचारों का प्रचार करते रहे। प्रथम महायुद्ध के छिड़ते ही राजनैतिक कारणों से उनका फ्रांस में रहना भी कठिन हो गया तो वे स्विट्जरलैण्ड की राजधानी जेनेवा आ गये। यहाँ पर ही 30 मार्च 1930 को उनका निधन हो गया।

श्यामजी कृष्ण वर्मा संस्कृत के प्रकाण्ड विद्वान् थे। उन्होंने प्राच्यविद्या विषयक बर्लिन सम्मेलन में भारत के प्रतिनिधि के रूप में भाग लिया तथा संस्कृत को एक जीवित भाषा सिद्ध करते हुए अपना विद्वतापूर्ण निबन्ध पढ़ा था। स्वामी दयानन्द के वे अत्यन्त विश्वासभाजन थे। यही कारण है कि श्री महाराज ने उन्हें परोपकारिणी सभा का सदस्य मनोनीत किया। 28 दिसम्बर 1885 को परोपकारिणी सभा के वार्षिक अधिवेशन में वे इस सभा के उपमंत्री नियुक्त किये गये। 1888 ई. के अन्त में वे अजमेर रहने लगे। यहाँ रहकर उन्होंने कुछ काल तक वकालत की। जब 1891 में वैदिक यंत्रालय प्रयाग से अजमेर ले आया गया तो उन्हें इस मुद्रणालय का अधिष्ठाता बना दिया गया किन्तु तत्कालीन प्रेस मैनेजर पं. रैमलदास से मतभेद हो जाने के कारण उन्होंने शीघ्र ही इस पद से त्यागपत्र दे दिया। अजमेर निवास काल में परोपकारिणी सभा के सक्रिय कार्यकर्त्ता श्री हरविलास शारदा से उनका मैत्री भाव स्थापित हो गया था। श्यामजी कृष्ण वर्मा की स्वामी दयानन्द के प्रति श्रद्धा जीवन के अन्त समय तक बनी रही। वे स्वामीजी को अद्वितीय राष्ट्रनेता तथा क्रान्तिकारी युगपुरुष के रूप में सम्मान देते थे।

'ऋषि दयानन्द के भक्त प्रशंसक और सत्संगी' से साभार

☞ *पृष्ठ 07 का शेष*

मेरी नैरोबी यात्रा...

शिलिंग का बिल आया तो सारा स्वाद किरकिरा हो गया। नीचे उतरने पर हमने उस बिल्डिंग में स्थित कांफ्रेंस हॉल देखा जहाँ विश्व सम्मेलन होते हैं। बड़ा विशाल हॉल है जहाँ हजारों आदमी बैठ सकते हैं। इसके बाद हम तीनों वहाँ का संसद भवन देखने गए। अधिकारियों से पास बनवाकर एक सिक्यूरिटी आफिसर हमें संसदभवन के हॉल में ले गए। सभी स्थान दिखाए। वहाँ की संसद में 172 सदस्य हैं, 23 मंत्री हैं, 13 मनोनीत सदस्य हैं। जिस अधिकारी ने हमें संसद भवन दिखाया उसका नाम श्री जार्ज अम्बीचय था जो हिंदी बिल्कुल नहीं जानता था। वह केवल केन्या की राष्ट्रभाषा स्वैली एवं अंग्रेजी जानता था। उसका व्यवहार बहुत ही अच्छा था और हमने उसके साथ बैठकर कोका कोला भी पिया जिसका दाम हमें 3 बोतलों का 3 शिलिंग देना पड़ा जो भारतीय मुद्रा के अनुसार 3 रुपये 20 पैसे होते हैं। इसके बाद हम केलिया के राष्ट्रपति श्री जोमो केन्याटा की कब्र देखने गए जो सिटी हालवे रोड़ पर स्थित है। कब्र के चारों खम्भों पर मसालें जल रही थीं। बड़े सैनिक अधिकारी भी चारों खम्भों के निकट खड़े थे और सर्वत्र गम्भीर शान्त वातावरण था। इसके पास ही नैरोबी का सबसे बड़ा और सुविधाओं से पूर्ण इण्टरनेशनल कॉन्टीनेन्टल होटल भी स्थित है जो दूर से काफी भव्य दिखाई देता है। इसके बाद हम पुनः वैदिक हाऊस आए और वहाँ से साउथ सी गए जहाँ पर स्वामी सत्यप्रकाश जी तथा पं. सत्यपाल जी ठहरे हुए थे। वहाँ पर सुन्दर आर्य समाज मन्दिर हैं, जो दर्शनीय हैं।

15–9–1978– प्रातःकाल यज्ञ आदि के पश्चात् जलपान करने के बाद दयानन्द होम से 12.30 बजे हम मेटाडोर द्वारा नेशनल पार्क देखने गए। हम पाँच मेटाडोरों में 34–35 व्यक्ति थे। यहाँ पर भिन्न–भिन्न प्रकार के जीव–जन्तु देखे। जमीन का कछुआ तथा पेड़ पर चढ़ा हुआ चीता प्रमुख दर्शनीय जानवर थे। इसके बाद हम नेशनल फॉरेस्ट देखने गए। यह यहाँ का भयानक जंगल है। यहाँ पर शेर, चीते, भेड़िये, शुतुर्मुर्ग, गेंडा, जिर्राफ, जंगली सूअर, नील गाय तथा भिन्न–भिन्न प्रकार के हिरन तथा वनमानुष अनेक भयानक जानवर देखे। ड्राइवर फौरन मेटाडोर रोक देता था। इन ड्राइवरों का रोज का काम होने के कारण, इन्हें पता रहता है कि कौन–सा जानवर कहाँ होगा। काफी दूर चलने के बाद अचानक हमें 6–7 शेर व शेरनियाँ दिखाई दिए। ड्राइवर ने मेटाडोर के शीशे बन्द करके और उनके पास हमें ले गया। हमारे साथ एक वयोवृद्ध श्री सूद इस दृश्य को देखकर डर गए। लेकिन मुझे वह दृश्य बहुत ही रोमांचकारी एवं अच्छा लगा। जीवन में मैंने कभी भी इस प्रकार का दृश्य नहीं देखा था। कारों के शीशे बन्द होने के कारण हम भयमुक्त थे। लगभग दस मिनट हम शेरों के मध्य रहे। इस अवसर पर हमारे साथ स्वामी ओमानन्द, चौधरी हीरासिंह, भूतपूर्व कार्यकारी पार्षद दिल्ली, श्री क्षितीश कुमार वेदालंकार, श्री सच्चिदानन्द शास्त्री तथा श्री सोमनाथ मरवाह थे। हमने वह झील भी देखी जहाँ पर शेर, चीते तथा अन्य खूँखार जानवर आकर पानी पीते हैं। कार की रफ्तार 115 किलोमीटर प्रति घंटा थी। 4.30 बजे हम दयानन्द होम वापस पहुँचे। संध्या 5.30 बजे हवन के लिए बैठे और रात्रि को स्वामी ओमानन्द जी तथा पं. सत्यपाल जी वेद शिरोमणि का प्रवचन हुआ।

क्रमशः....

आर्य समाज टैगोर गार्डन
नई दिल्ली – 110027
मो. – 09212003162
फोनः 08700101500

www.thearyasamaj.org

☞ पृष्ठ 02 का शेष

मानव जीवन गाथा...

परमात्मा की सविता–शक्ति ने इस सोती हुई प्रकृति को प्रेरणा दी। गति उत्पन्न हुई, महत्तत्व व समष्टि बुद्धि का जन्म हुआ। तब अहंकार जाग उठा। इसी अहंकार से अग्नि, वायु, जल, पृथिवी और आकाश की पाँच तन्मात्राओं का जन्म हुआ। इन तन्मात्राओं से पाँच भूतों का जन्म हुआ। उनसे यह सब – कुछ बना जिसे हम आज देखते हैं। परन्तु जब यह सब – कुछ हुआ, उससे पूर्व कुछ भी नहीं था, गहन अन्धकार था केवल। उसमें प्रकृति परमाणुओं का विशाल सागर बनकर सोई हुई थी। उनमें रूप नहीं था, रस नहीं था, शब्द नहीं था, गन्ध नहीं थी, स्पर्श नहीं था, कुछ भी नहीं था। और जिस प्रकार उस समय कुछ नहीं था, इसी प्रकार फिर एक समय आयेगा जब यह सब कुछ सो जायेगा। तब ऐसी कोई वस्तु नहीं रहेगी जिसे कोई देख सके, सूँघ सके, छू सके या चख सके। सब समाप्त हो जायेगा। अन्धकार में डूब जायेगा। यह जगत् है न, यह सर्वदा इसी प्रकार चलता जायेगा। पानी चलता है, वायु चलती है, ग्रह, नक्षत्र, सूर्य, पृथिवी सब चल रहे हैं, चलते ही रहते हैं, इसीलिए इसका नाम जगत् है। जगत् का अर्थ है चलता हुआ। विनाश से आरम्भ होकर विनाश की ओर चला जा रहा है यह सब कुछ। जो कुछ दृष्टिगोचर होता है, यह रहनेवाला नहीं–

दो दिन की ज़िन्दगी में न इतना उछल के चल।
दुनिया है चल–चलाव कि रस्ता सँभल के चल।।

गीता की भाषा में इसी को वैराग्य कहते हैं और मुण्डक–उपनिषद् में इसी को सम्यक् और यथार्थ ज्ञान। इस ज्ञान के उत्पन्न होते ही प्रश्न उठता है कि यदि यह सब – कुछ चल रहा है, यदि सब – कुछ समाप्त होनेवाला है तो वह कौन है जो चल नहीं रहा, जो समाप्त नहीं होगा, जो उस समय भी रहता है जब सब – कुछ समाप्त हो जाता है?

यह जो समाप्त नहीं होता, जो परिवर्तित नहीं होता, चलता नहीं, वह है आत्मा। यह जो कुछ भी है, इसके अन्दर वह छिपा बैठा है। इस शरीर में भी है। इन आँखों को खोलने से दिखाई नहीं देता, इनको बन्द करके दिखाई देता है–

उल्टी ही चाल चलते हैं दीवानगाने–इश्क (प्रेमी)।
आँखों को बन्द करते हैं दीदार (दर्शन) के लिए।।

परन्तु जो भीतर बैठा है वह बाहर की आँखों को बन्द किये बिना दिखाई कैसे देगा? बाहर की ओर जो कुछ भी है, इसकी ओर से अपने को हटा लो। एक आसन में बैठ जाओ। गायत्री मन्त्र का, ओ३म् का अथवा किसी भी दूसरे नाम का जाप करो। तब धीरे–धीरे उसका प्रकाश समक्ष आने लगेगा। इसी प्रकाश में वह दृष्टिगोचर होगा। वह जो अजर और अमर है, जो उस समय भी था जब कुछ भी नहीं था और उस समय भी रहेगा जब और कुछ भी नहीं होगा, वह है तुम्हारा अपना–आपा। वह परम–परम सत्य है। वह है अमृत। उसी के भीतर वह परम शक्तिमान् बैठा है जिससे बड़ा कोई आनन्द नहीं, जिससे बड़ी कोई ज्योति नहीं, जिससे बड़ी कोई शक्ति नहीं।

कितनी सरलता से कह दिया मैंने सब – कुछ! परन्तु इस अमृत को देख लेना और जान लेना तो इतना सुगम नहीं। आसन लगा लिया आपने, आँखें मूँद लीं, जाप भी कर रहे हैं परन्तु यदि मन भागता फिरता है कनॉट प्लेस में, फिर दिखाई क्या देगा? उस समय मन को ज्ञान से समझाइये, प्रेम के साथ उसे कहिये– अरे, जिसके लिए व्याकुल हो रहा है तू, वह है क्या? यह सुन्दरता, यह तड़क–भड़क, यह सब कुछ जो दृष्टिगोचर होता है, यह तो चार दिनों का मेला है। जिस सौन्दर्य ने तुझे व्याकुल बना दिया, वह कुछ वर्ष पूर्व कहीं था नहीं। कुछ वर्ष पश्चात् कहीं रहेगा नहीं। यह धन–सम्पति, वैभव, परिवार, सब ऐसे ही तो हैं–

यह दुनिया मेला चार दिनन का मत कर या से हेत।
प्रभु चरनन चित लाइये, जो पूरण सुख देत।।

इस प्रकार मन को समझाइये। इस प्रकार न समझे तो इसे कहिये– अरे मन मेरे! तू नपुंसक है– न पुरुष, न स्त्री। अरे स्त्रियों में जाएगा तो वे तेरा उपहास करेंगी। पुरुषों में जाएगा तो वे भी अपमान करेंगे। नपुंसक है तू! ब्रह्म के पास चल, वह भी नपुंसक है– न पुरुष, न स्त्री। इस प्रकार भी न समझे तो ज्ञान की दूसरी बातें बताइये। ज्ञान द्वारा मन को बाँधने का प्रयत्न कीजिये।

मन पंछी तब लग उड़े, विषय वासना माँहि।
ज्ञान बाज की झपट में, जब लग आया नाँहि।।

सम्यक् या ठीक ज्ञान से मन वश में आता अवश्य है। इसके वश में होने से आत्मा के दर्शन भी होते हैं।

सत्य, तप और सम्यक् ज्ञान के अतिरिक्त आत्मदर्शन के लिए चौथी आवश्यक वस्तु है ब्रह्मचर्य, क्योंकि जिन लोगों ने अपने शरीर की शक्ति को बचाकर नहीं रखा, जो अपनी शक्ति को नष्ट करके निर्बलता मोल ले रहे हैं, उन्हें कभी आत्मदर्शन हो नहीं सकता–

नायम् आत्मा बलहीनेन लभ्यः।

यह आत्मा निर्बल मनुष्य को कभी प्राप्त नहीं होता।

क्रमशः....

☞ पृष्ठ 06 का शेष

मुक्ति...

यज्ञ का विस्तृत अर्थ है–

(1) यज्ञ का अर्थ ऋग्वेद के अनुसार है समान प्रवृत्ति के लोगों को संगठित करना।

(2) एक दूसरे में मित्रता का भाव उत्पन्न करना तथा दूसरों की सदा सहायता में तत्पर रहना।

(3) अपने गुरु, माता–पिता व अपने से बड़ों के प्रति आदर भाव व उनकी आज्ञा का पालन करना। इससे मन में सात्विक भाव उत्पन्न होते हैं।

तप तीन प्रकार के होते हैं–

(1) शरीर का तप, मन का तप और वाणी का तप। शरीर के तप का अर्थ है कि मनुष्यों को सदा सच्चे मन से परोपकार करना चाहिये। सभी जीवधारी व वन्य सम्पदा का परम हितैषी होना चाहिये।

(2) मन का तप इसका अर्थ है मनुष्यों को प्रबल संकल्पशक्ति के द्वारा समस्त विकारों को सदैव दूर करना चाहिये। इसके प्रति सदा सचेत रहना चाहिए।

(3) वाणी का तप– इसका अर्थ है मनुष्य सदा मृदुल व्यवहार करे। ऐसी बात जिससे किसी की आत्मा को दुख पहुंचे कभी नहीं कहनी चाहिए। प्रेमपूर्वक व्यवहार करना चाहिए। इसके लिये यह यजुर्वेद का मंत्र सहायक होगा–

यज्जाग्रतो दूर मुदैति दैवं तदु सुप्तस्य तथैवेति।
दूरगमं ज्योतिषामं ज्योतिरेकमं तन्मे मनः
शिवसंकल्पमस्तु।

अर्थात् जागृत अवस्था में अथवा सुप्त अवस्था में अपनी इन इन्द्रियों को नियंत्रित करके श्रेष्ठ मार्ग पर लगाये। मन जब तक इन्द्रियों के आधीन रहेगा वह भक्ति के मार्ग में व्यवधान उपस्थित करेगा। यह इस मार्ग में तस्कर के समान है। ऋषि–मुनि, स्वयं देवता व त्रिदेव भी सदा समाधि में तल्लीन रहते थे और सदा इन विकारों को दूर करने का प्रयत्न करते थे।

दान का अर्थ अथर्ववेद के अनुसार–

यह दान उन जरूरतमंदों को दिया जावे जिनको इसकी अति आवश्यकता है। भूखे को खिलाने का बहुत महत्त्व है। और अथर्ववेद में ऋषि कहते हैं वही दान सार्थक है जिसे सुपात्र को दिया जावे, इतना समुचित मात्रा में दिया जावे जिससे वह दुबारा भिक्षा न मांगे। अर्थात् उस व्यक्ति का काम धंधा लगाकर देवें विद्यार्थियों को अध्ययन करने के लिये धन दिया जावे तथा पुत्रवत लालन पालन किया जावे। दान जिससे दानी के मन में अपनी ख्याति की कोई इच्छा न हो। वह रजोगुण से प्रभावित नहीं हो वह दानी व्यक्ति ईश्वर को अति पसंद है।

शास्त्रानुसार अपनी आय का दसवा अंश दान करने का प्रावधान है। साधक जो मनोवियोग से उपरोक्त कार्यों द्वारा श्रेष्ठ मार्ग पर अग्रसित होते हैं वही उनके स्थाई परिचय के अधिकारी होते हैं। आत्मा उनसे अति प्रसन्न होती है और मनुष्य सदा सुखी व प्रसन्नचित्त रहता है। ऐसे मनुष्यों की आत्मा ईश्वर से मुक्ति के लिए अनुमोदन करती है। उनसे ही ईश्वर सदा प्रसन्न रहते हैं तथा वे ही मनुष्य स्थाई निमन्त्रण के अधिकारी होते हैं। अर्थात मनुष्य जब नश्वर शरीर से मुक्त होता है। सबसे आवश्यक बात यह कि मनुष्य को पांच ऋण से उऋण होना पड़ता है। जैसे पांच भूत पृथ्वी, जल, अग्नि, आकाश व वायु।

वास्तव में भगवत गीता में कृष्ण के सारे उवाच ऋगवेद के मंत्र सूक्त ४१ से 10 के मंत्रों की पुनारावृत्ति मात्र है। इससे अलग कुछ भी नहीं है। इसका प्रमाण इन मंत्रों को पढ़ने से मिलता है। दूसरा गुरु माता–पिता व समाज का ऋण। इसका फैसला ईश्वर करते हैं कि वास्तव में मनुष्य इन ऋणों से मुक्त हुआ या नहीं। इसकी ईश्वर बड़ी कठोर परीक्षा लेते हैं। हो सकता है यह एक जन्म में सम्भव न हो परन्तु इसका प्रयास कई जन्मों तक चलता रहे। विश्वास मानिये भगवत गीता में श्री कृष्ण ने स्पष्ट कहा है जो व्यक्ति ईश्वर की प्राप्ति के लिए अन्तिम समय में इच्छा रखते हैं उनकी ईश्वर मनुष्य योनि दुबारा दे सकते हैं। जब ईश्वर मनुष्य के कार्यकलापों से पूर्णतया अश्वस्त होते तभी उनको स्थाई निमन्त्रण मिलता है। और नश्वर शरीर को त्याग कर जीव उन्मुक्त उनके सान्निध्य में आ जाता है जहां वह स्थाई रूप से रह सकता है और सदा आनन्दित रहता है। अन्य जीवों से मिलकर उसको सुख की अनुभूति होती है। वह जीवन चक्र से बच जाता है। उसे दुबारा पृथ्वी पर दुख नहीं भोगना पड़ता। इसी का नाम मुक्ति है। इसका सम्पूर्ण विवरण स्वामी दयानन्द सरस्वती ने अपनी पुस्तक सत्यार्थ प्रकाश में जो वेदों पर आधारित है दिया है।

मेरा पाठकों से विनम्र निवेदन है कि यद्यपि यह कार्य अत्यंत दुष्कर है परन्तु इसका यथाशक्ति प्रयत्न करने पर ईश्वर भी प्रसन्न होते हैं। आप जीवन पर्यन्त प्रयत्न करते रहिये। आपके चित्त में अगर ईश्वर प्राप्ति की तीव्र इच्छा होगी तो सच मानिये ईश्वर उदार प्रवृत्ति होने के कारण आपको दुबारा मनुष्य की योनि देंगे। परन्तु ईश्वर इसके लिये आपके कार्यकलापों की कड़ी परीक्षा लेते हैं। उत्तीर्ण साधकों को ही मनुष्य का जन्म मिलता है। यह कार्य अनन्त काल तक चलता रहता है। विश्वास जानिये आपको कभी न कभी मुक्ति मिल अवश्य ही जावेगी।

19033, ए.टी.एस., एडव.
वैभव खण्ड, इन्दिरापुरम, गा0बाद
मो. 9899349683

www.thearyasamaj.org

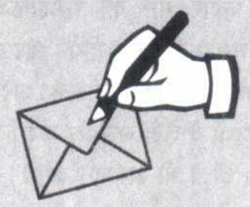

पत्र/कविता

देश प्रेम का यह तो अर्थ नहीं

देश प्रेम का यह तो अर्थ नहीं कि देश प्रेम के गीत गा लिए और कुछ नहीं करना। गीत तो आवश्यक हैं, प्रेरणा मिलती है कुछ अन्तः मन से भी देश प्रेम की जिज्ञासा होती है। देश के लिए वह सब कुछ करना होगा जिससे देश का गौरव बढ़े, देश को लाभ हो, कोई दुःखी न हो, सब प्रेम से रहें। आपस में ईर्ष्या। वैमनस्य न हो, कहीं झगड़ा–फसाद न हो, परस्पर विचारों का सम्मान करें, मानवता का ध्यान करें।

हमें हर बात को देश हित से जोड़ना चाहिए। आज पता नहीं कितने सहस्रों बच्चे बिना दूध के रह जाते हैं, उन्हें दूध नहीं मिल पाता। नवजात नन्हें शिशुओं को तो दूध आवश्यक है, उधर दूसरी ओर दूध का दुरुपयोग हो रहा है। शिवालयों, पीपल के वृक्षों, नदियों आदि में सहस्रों टन दूध भगवान की पूजा के नाम से बहा दिया जाता है। अंध–विश्वास के नाम पर यह पाखंड देश प्रेम नहीं, ना ही यह ईश्वर की कोई भक्ति है। अच्छा होता यह दूध नन्हें शिशुओं को दिया जाता जिन्हें आवश्यकता है उन्हें दिया जाता। अनेक झोंपड़ियों में अनेक बच्चे जिन्हें भरपेट उच्च कोटि का भोजन नहीं मिलता उनकी सहायता करनी चाहिए। उनको दूध व पौष्टिक भोजन मिले उनके स्थान पर पाखंड रूपी पूजा जिसमें दूध को पानी की भांति व्यर्थ बहाया जाता है, बंद करना चाहिए। वैष्णों देवी, मन्शा देवी, केदारनाथ, बद्रीनाथ, मथुरा–काशी आदि पर पचास–पचास हज़ार से एक लाख रुपये तक व्यर्थ बहा दिए जाते हैं परंतु एक गरीब के इलाज में आदमी हजार रुपये नहीं दे सकता। अनेक गरीब आज मंहगाई के समय में बीमारियों का समुचित इलाज नहीं करा सकते, तड़पते रहते हैं और काल कवलित हो जाते हैं। पाखंडों के नाम पर करोड़ों रुपया बहा दिया जाता है, यह धन गरीबों के इलाज के लिए एक कोष में एकत्र किया जाए तो यह देश–प्रेम की ओर ही एक सराहनीय कदम होगा।

खाद्य पदार्थों को शुद्ध बनाना, सच्चाई से कार्य करना, किसी का अहित न करना भी देश–प्रेम है। परंतु हो रहा है उल्टा। आज खाद्य पदार्थों में मिलावट का बाजार गर्म है और जो न मिलाए तो भी अनेक सरकारी अफसर घूस लेकर ही मानते हैं। एक राज्य में छप्पन हजार लीटर दूध सड़कों पर बहा दिया गया। किसी न किसी का इसमें दोष था ही परंतु इतना दूध व्यर्थ में गया। कहां तो दूध मिल नहीं रहा, कितने शिशुओं के मुंह से दूध छिन गया यह शर्म की बात है।

आरक्षण आंदोलन जैसे दुष्टकृत्यों से देश अवनति की ओर जाता है। राष्ट्र की सम्पत्ति चाहे रेल, बस, व्यक्ति, स्त्री व बच्चे हों, स्मारक भवन, खजाना यह हम सब लोग इस देश के ही तो हैं। उन्हें लूटना, क्षति पहुँचाना, तोड़–फोड़ करना जैसे अपने घर को ही तोड़फोड़ करना है।

डॉ. बिजेन्द्र पाल सिंह
चन्द लोक कालोनी
खुर्जा (उ.प्र.)
08979794715

****

महान सन्त–आचार्य बलदेव महाराज

आचार्य बलदेव जी, सार्वदेशिक प्रधान,
ईश भक्त धर्मात्मा, थे सच्चे इंसान।
थे सच्चे इंसान, वेद मर्यादा पालक,
स्वामी ओमानन्द, गुरु थे उनके लायक।
देश भक्त, गुणवान, धर्म के ये अनुरागी,
परोपकारी सन्त, सत्यवादी थे त्यागी।
खोला गुरुकुल कालवा, किया धर्म का काम,
देव पुरुष ने कर दिया, सकल विश्व में नाम।
सकल विश्व में नाम, हजारों बाल पढाए,
देश भक्त विद्वान, सैंकड़ों शिष्य बनाए।
राजसिंह अरू धर्मवीर को, ज्ञान सिखाया,
रामदेव को सकल विश्व में है चमकाया।
दर्शनाचार्य थे बड़े, थे गोभक्त महान्,
आर्य जगत् में सब जगह, उनका था सम्मान।
उनका था सम्मान, कर्म अच्छे करते थे,
मानवता के पुंज, पराया दुख हरते थे।
हिन्दी–रक्षा–सत्याग्रह में, काम किया था,
तारा सिंह, प्रताप सिंह को, हरा दिया था।
आचार्य प्रवर गए, छोड़ सकल संसार,
मौत अचम्भा है बड़ा, मित्रो! करो विचार।
मित्रो! करो विचार, जगत् में जो जन आता,
राजा हो या रंक, काल सबको खा जाता।
राम, कृष्ण, चाणक्य, न यम से बचने पाए,
अर्जुन, पृथ्वीराज, काल ने ग्राम बनाए।
सुनो आर्यो! ध्यान से, एक काम की बात,
आपस में तुम मत करो, मित्रो! घूंसे–लात।
मित्रो! घूंसे–लात, करोगे, पछताओगे,
कहता हूं मैं साफ, एक दिन मिट जाओगे।
जगत् गुरु ऋषि दयानन्द की, शिक्षा मानो,
अहंकर दो त्याग, धर्म अपना अब जानो।

पं. नन्दलाल 'निर्भय'
आर्य सदन, बहीन
जनपद–पलवल (हरियाणा)
मो. 09813845774

निःस्वार्थ भावना जहाँ सौहार्द वहाँ

विनयी व्यक्ति खुद ही नहीं झुकता, बल्कि संसार को भी झुका लेता है, जो झुकना जानता है, संसार उसे उठाता है!

अहंकार हमारे उत्थान में सबसे प्रमुख बाधक है, यदि आप इससे झुटकारा चाहते हैं तो सेवा भाव का निरन्तर अभ्यास करें।

सौहार्द अमोघ शास्त्र है जो निष्फल नहीं होता। निःस्वार्थ सेवा–भावना जिन परिवारों में होती है, वहाँ सौहार्द का अस्तित्व अवश्य होगा।

कृष्णा मोहन गोपाल
113–बाजार कोट
अमरोहा–244221

****

उत्सव तो छोड़ो याद भी नहीं किया

राष्ट्रीय मचं पर कोई बात हो तो हम बहुत फ़क़र (गौरव) से कहते हैं–लाला लाजपतराय आर्य समाजी थे। उनकी इस बात को दोहराते है–आर्य समाज मेरी माँ है और स्वामी दयानन्द मेरे पिता।

पर अभी जब उनकी 150 वीं जन्म शताब्दी हुई तो किसी आर्य समाज में उत्सव तो छोड़ो, याद भी नही किया। किसी भजनोपदेशक दो साल में कम से कम 30 अभिनन्दन हो जाते हैं। उनका ही नहीं उनके तबलची का भी जो कि आर्य समाजी भी नहीं होता। और जिन्होंने देश, समाज और आर्य समाज के लिये सब कुर्बान कर दिया उन का नाम भी नहीं।

वाह रे आज के आर्य समाज

भारतेन्दु सूद
231/45–ए चण्डीगढ़

****

नारी का सम्मान करो

लडकी पैदा हो जाने पर,
घर में मातम सा छा जाता है,
लडका यदि जन्म लेता,
घर खुशियों से भर जाता है।
लडकी का पालन पोषण भी,
लापरवाही से होता है।
लडका शीघ्र जवाँ हो जाये,
ध्यान विशेष दिया जाता है।
अरे! लड़की को लड़का समझो,
उसे पढ़ाओ योग्य बनाओ।
नारी नर की खान है,
नारी का सम्मान करो।

ले.देवराज आर्य मित्र
wz–428 हरि नगर
नई दिल्ली–64

****

www.thearyasamaj.org

डी.ए.वी. अशोक विहार (फेज़-4) में 'महोत्सव-कृति' का सफल आयोजन हुआ

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल अशोक विहार तथा रोटरी क्लब ऑफ दिल्ली अपटाउन की संयुक्त मेजबानी में वार्षिक अंतर्विद्यालयी प्रतियोगिता महोत्सव-कृति 'क्रिएटिंग द क्रिएशंस' का सफलतापूर्वक आयोजन किया गया। रचनात्मकता एवं नूतन विचारों को समर्पित इस उत्सव का आयोजन प्रतिवर्ष नई एवं उभरती हुई प्रतिभाओं को प्रोत्साहन देने एवं एक सार्थक मंच देने के उद्देश्य से किया जाता है, जिससे छात्रों में छिपी ऊर्जा एवं रचनात्मकता सतत प्रवाहमान रहे तथा उसे एक नई दिशा मिल सके।

कार्यक्रम का शुभारंभ 'दीप प्रज्वलन' के साथ किया गया। तत्पश्चात् विभिन्न आयुवर्गों के छात्रों ने विभिन्न प्रतियोगिताओं में भाग लिया जिनका वर्णन इस प्रकार है-स्वरांजलि-(शास्त्रीय संगीत पर आधारित एकल गायन प्रतियोगिता), स्वर सुधा-(प्रचलित संगीत पर आधारित एकल गायन प्रतियोगिता), किक अप वन्स हील-(समूह नृत्य प्रतियोगिता), फोक लिरिक-(समूह 'लोकनृत्य प्रतियोगिता), पैनोरामा-(कैनवास पेंटिंग प्रतियोगिता) क्रिएटिव हैंड्स-(कैलीग्राफी कला प्रतियोगिता) स्किल ड्रिल-(जूट बैग की सजावट), हार्नेसिंग क्रिएटिविटी (बेस्ट आउट ऑफ वेस्ट) शुलज़ेतुंग (जर्मन समाचार पत्र डिज़ाइनिंग), साइबर सिक्योरिटी-(इन्क्प्लीट विदाउट 'यू'), बिट बाई बिट (बढ़ते साइबर अपराधों के प्रति जागरूकता) तथा फेस्टिव-डेलिकेसी (फूड शूट) आदि प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। सर्वाधिक पुरस्कार जीतने वाले डी.एल.एफ. पब्लिक स्कूल, साहिबाबाद के विद्यार्थियों ने रोलिंग ट्रॉफी पर अपना अधिकार सुरक्षित किया।

जाने-माने कैलिग्राफी विशेषज्ञ श्री हरीश चंद्रा तथा सुश्री सुमित कौर को उपरोक्त प्रतियोगिताओं में निर्वायक के रूप में आमंत्रित किया गया था। विद्यालय के मैनेजर श्री जी.आर. साहनी ने कार्यक्रम की अध्यक्षता की तथा विजेता छात्रों को पुरस्कार प्रदान किए। विद्यालय की प्राचार्या श्रीमती कुसम भारद्वाज ने विजेताओं को उनके सराहनीय प्रदर्शन के लिए बधाई देते हुए सभी प्रतियोमियों के प्रयासों की मुक्त कंठ से सराहना की।

आखिर क्यों?

तुम मुझे चर्च,
गुरुद्वारे
मंदिर-मस्जिद में
बांट देते हो
मैं पैदा होता ही हूँ कि
तुम मेरा खतना कर मुझे मुसलमान
नामकरण संस्कार कर हिन्दू
क्रास पहनाकर ईसाई
बना देते हो
तुम मुझे खेलने की पढ़ने की,
मित्र चुनने की
पत्नी चुनने की
अपना कार्य-क्षेत्र स्वयं तय करने की
भोजन करने की
हर प्रकार की स्वतंत्रता देते हो
फिर क्यों मेरे बगैर पूछे,
बगैर समझे
मुझे, मनुष्य बनूँ इससे पहले,
हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, ईसाई
बना देते हो
क्यों, आखिर क्यों?

देवेन्द्र कुमार मिश्रा
पाटनी कालोनी, भरत नगर, चन्दनगाँव
जि.छिन्दवाड़ा (म.प्र.) 480001

चुनाव समाचार

आर्यसमाज सैक्टर-14, सोनीपत

श्री ईश्वर दयाल शर्मा	प्रधान
श्री बी.डी. गांधी,	उपप्रधान
श्री युधिष्ठर गुगलानी	मन्त्री
श्री अशोक आर्य	कोषाध्यक्ष
श्री मीत राज कुकरेजा	पुस्तकाध्यक्ष

आर्य उप प्रतिनिधि सभा, कानपुर नगर

श्री अशोक कुमार आनन्द	प्रधान
श्री आनन्द जी आर्य	उपप्रधान
श्री विनोद कुमार आर्य	मंत्री
श्री अनिल चोपड़ा	कोषाध्यक्ष
श्री सुरेन्द्र गेरा	पुस्तकाध्यक्ष

आर्य समाज सीताफलमण्डी सिकन्दराबाद

श्री आर. कृष्णमूर्ति जी	
श्री एन. दशरथ जी	
श्री डि. नरसय्या जी	प्रधान
श्री यु. यादगिरी जी	उपप्रधान
श्री डि. गंगाधर जी	मन्त्री
श्री के भास्कर राव जी	सहमंत्री कोषाध्यक्ष
श्रीमति आर. रोजा श्री	

आर्य समाज, भिलाई ने चलाया वेद प्रचार अभियान

आर्य समाज सैक्टर-6 भिलाई (छत्तीसगढ़) का 29 दिवसीय वेद प्रचार अभियान 2016 सफलता पूर्वक संपन्न हुआ। इस आयोजन में भिलाई दुर्ग के विभिन्न स्थानों व घरों में पारिवारिक यज्ञ एवं प्रवचन हुए। इन कार्यक्रमों में श्रद्धालुओं ने बढ़ चढ़ कर भाग लिया।

कार्यक्रमों को सफल बनाने के लिए वेदों के विद्वान आचार्य महावीर मुमुक्षु जी मुरादाबाद से तथा आचार्य नरेन्द्र मैत्रेय जी दिल्ली से पधारे थे। इसके अलावा भजनोपदेशक आचार्य सुमित्र देव आर्य सहारनपुर से तथा सतीश सुमन जी (मुजफ्फर नगर से पधारे थे)। उपदेश प्रमुखतः पंच यज्ञ अर्थात् ब्रह्म यज्ञ, देव यज्ञ, पितृ यज्ञ, बलिवैश्व देव यज्ञ एवं अतिथि यज्ञ पर विशेष बल दिया।

इस कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए प्रधान श्री जितेन्द्र प्रकाश सल्होत्रा, मंत्री रवि आर्य एवं वेद प्रचार अधिष्ठता श्री राजकुमार शास्त्री ने सतत निरंतर सहयोग प्रदान किया।

आर्य विद्वानों से अनुरोध

प्रतिवर्ष ऋषि बोधोत्सव के अवसर पर टंकारा समाचार का ऋषि बोधांक प्रकाशित किया जाता है। आगामी बोधोत्सव 23,24,25 फरवरी 2017 को समारोह पूर्वक आयोजित किया जा रहा है और इसी अवसर पर 'टंकारा समाचार' का ऋषि बोधांक प्रकाशित होगा।

आपसे प्रार्थना है कि आप अपने सारगर्भित अप्रकाशित लेख एवं कविता 15 जनवरी 2017 तक भिजवाकर कृतार्थ करें। लेख वेद, स्वामी दयानन्द, योग स्वास्थ्य आदि एवं अन्य जन उपयोगी प्रेरणादायक विषयों पर ही सीमित हों। ऐसा निर्णय किया है कि प्रकाशनार्थ सामग्री टाईप की हुई दो या तीन पृष्ठों से अधिक न हो, तो सुविधाजनक रहेगा। आप प्रकाशनार्थ सामग्री ईमेल tankarasamachar@gmil.com पर "वॉकमेन चाणक्य" टाईप में कम्पोज करके भी भिजवा सकते हैं। लेख सम्पादक के नाम ए-419/डिफेन्स कालोनी नई दिल्ली (110024) के पते पर भेजें। सम्पर्क के लिए 9810035658 नम्बर पर कॉल करें-सम्पादक टंकारा समाचार

www.thearyasamaj.org

Delhi Postal R. No. D.L. (ND)-11 \6066\2015-17
अग्रिम अदायगी के बिना भेजने का लाइसेंस नं. U(C)-103 \2015-17
Posted at N.D.P.S.O. ON 30-11-2016 & 01-12-2016
रजिस्ट्रेशन नं. आर0 एन0 आई0 39\57

डी.ए.वी. द्वारका ने मनाया महर्षि दयानन्द निर्वाणोत्सव

डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल द्वारका में विद्यालय के प्रांगण में बड़ी श्रद्धा एवं उल्लास के साथ महर्षि दयानन्द जी का निर्वाणोत्सव मनाया गया। इस अवसर पर कक्षा पांचवी, छठी, और सातवीं के छात्र/छात्राओं ने बड़े उत्साह से भाग लिया। इस अवसर पर विद्यालय द्वारा एक बृहद् यज्ञ का आयोजन किया गया और छात्रों के द्वारा आर्यसमाज के नियम तथा स्वामी दयानन्द जी की स्तुति में गीत/भजन आदि प्रस्तुत किए गए। कार्यक्रम बहुत ही ज्ञानप्रद एवं रोचक था। **"कृण्वन्तो विश्वमार्यम्"** के जयघोष से विद्यालय गूंज रहा था। विद्यालय के शिक्षकों द्वारा स्वामी दयानन्द जी के जीवन

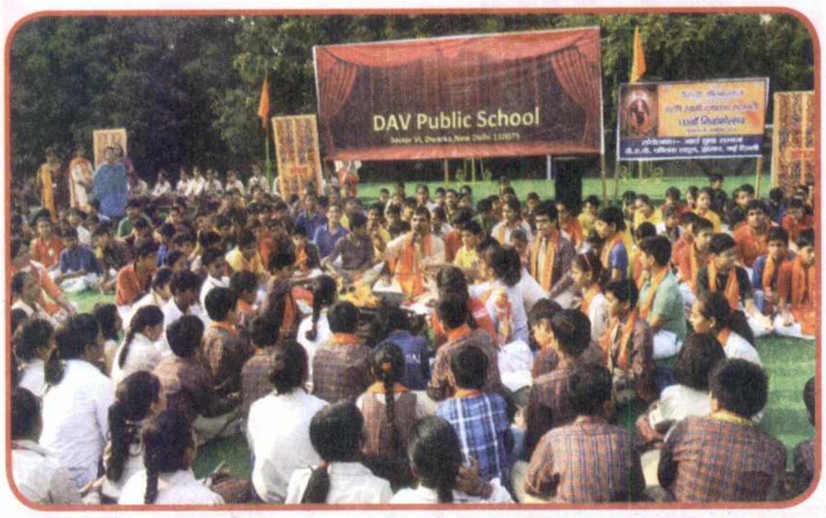

पर प्रकाश डाला गया। कार्यक्रम के अन्त में विद्यालय **प्राचार्या श्रीमती मोनिका मेहन जी** ने सभी को आशीर्वाद दिया और संबोधित करते हुए कहा कि–स्वामी दयानन्द जी न केवल समाज सुधारक थे अपितु समाज में व्याप्त कुरीतियों, अन्धविश्वासों, पाखंडों को दूर करने में उन्होंने अपना पूरा जीवन समर्पित कर दिया था। आर्य समाज की स्थापना करके उन्होंने समाज को एक नई दिशा प्रदान की जिससे वैदिक संस्कृति और सभ्यता का उत्थान हुआ। स्वामी दयानन्द जी युगद्रष्टा थे। हम सबको स्वामी जी के जीवन से प्रेरणा लेते हुए आर्य अर्थात् श्रेष्ठ भारत के सृजन में महत्वपूर्ण योगदान देना चाहिए। कार्यक्रम के उपरान्त शान्ति पाठ कर प्रसाद वितरित किया गया।

बी.बी.के डी.ए.वी. ने 'क्षेत्रीय युवा मेला' में जीती ओवर-ऑल चैम्पियनशिप ट्रॉफी

बी.के डी.ए.वी. कॉलेज फॉर विमेन, अमृतसर ने जी.एन.डी. यू–'क्षेत्रीय युवा मेला' 'ए' ज़ोन की इस वर्ष की ओवर–ऑल चैम्पियनशिप ट्राफी जीती।

महाविद्यालय ने यह चैम्पियनशिप ट्रॉफी 129 अंकों से जीतने के साथ–साथ और 133 प्रतियोगिताओं में 27 श्रेणियों में उच्च स्थान अर्जित किए। प्रतिभागियों द्वारा 15 श्रेणियों–लैंडस्केप, कौलॉज, कार्टूनिंग, क्ले–मॉडलिंग, पोस्टर–मेकिंग, ऑन द स्पॉट फोटोग्राफी, रंगोली, फुलकारी, फेंसी ड्रैस/कॉस्ट्यूमस, क्विज़, भारतीय समूह गीत, क्लासिकल वोकल, वेस्टर्न सोलो, वेस्टर्न ग्रुप, शास्त्रीय नृत्य, में प्रथम स्थान, 9 श्रेणियों–इन्स्टालेशन, नाटक, माइम,

मिमिक्री, वाद–विवाद, कविता, वार–गायन, लोक नृत्य, गिद्दा में द्वितीय स्थान और तीन श्रेणियों–गज़ल, कविश्री और समूह भजन में तृतीय स्थान अर्जित किया।

प्राचार्या डॉ. पुष्पिंदर वालिया ने महाविद्यालय के शानदार प्रदर्शन पर युवा भलाई कमेटी को उनके कठिन परिश्रम एवं सुप्रयत्नों के लिए हार्दिक बधाई दी। उन्होंने विजेता छात्राओं की भी भरसक प्रशंसा की और उन्हें भविष्य में और बढ़िया प्रदर्शन करने के लिए प्रोत्साहित किया। उन्होंने कहा कि महर्षि दयानन्द जी के श्रेयस्कर प्रयासों से ही आज नारी हर क्षेत्र में अपनी विजय की पताका फैला रही है।

प्रो. (डॉ.) रितू शर्मा, डीन, युवा भलाई, प्रो. मनदीप सोखी, मुख्य संयोजक, युवा भलाई, युवा–सह संयोजक प्रो. (डॉ) रानी, प्रो. (डॉ.) सुनीता, प्रो. शिफाली, प्रो. ललित, प्रो. मनप्रीत कौर बुट्टर और प्रो. अंकुर शर्मा ने भी विजेता प्रतिभागियों को मुबारकबाद दी।

डी.ए.वी. फरीदाबाद में ऋषि निर्वाणोत्सव पर पोस्टर मेकिंग प्रतियोगिता सम्पन्न

आर्य समाज के संस्थापक, वेदों के अद्वितीय विद्वान् व भाष्यकार अखण्ड ब्रह्मचारी, युगप्रवर्तक, महर्षि दयानन्द सरस्वती जी के 133वें निर्वाण उत्सव पर डी.ए.वी. पब्लिक स्कूल, सैक्टर–14 फरीदाबाद (हरियाणा) में विशाल स्तर पर एक पोस्टर निर्माण प्रतियोगिता आयोजित की गई।

इस प्रतियोगिता में विद्यालय के लगभग 30 बच्चों ने भाग लिया। उन्होंने ऋषि दयानन्द जी की विविध मुद्राओं पर सुन्दर–सुन्दर पोस्टर बनाए। विद्यालय के प्राचार्य श्री सुरेन्द्र सिंह चौधरी की अध्यक्षता में एवम् विद्यालय की कला अध्यापिका के निर्देशन में यह प्रतियोगिता आयोजित की गई। इस प्रतियोगिता में प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा सान्त्वना पुरस्कारों से छात्रों को सम्मानित किया गया। इस अवसर पर प्राचार्य महोदय ने ऋषिवर के जीवन पर आधारित घटनाओं का उल्लेख कर बच्चों को प्रेरणा का संदेश दिया और सदैव आगे बढ़ने व स्वस्थ रहने हेतु आशीर्वाद प्रदान किया।

आर्य प्रादेशिक प्रतिनिधि सभा मंदिर मार्ग के लिए **एस.के शर्मा** द्वारा प्रकाशित एवं मुद्रित **अरावली प्रिंटर्स एण्ड पब्लिशर्स (प्रा.) लि.,** डब्ल्यू–30, ओखला, फेस–II, नई दिल्ली–110020 (दूरभाष : 26388830–32) से मुद्रित एवं कार्यालय **'आर्य जगत्'** आर्यसमाज भवन मंदिर मार्ग नई दिल्ली से प्रकाशित मो.–9868894601, 23362110, 23360059 सम्पादक – **पूनम सूरी**